# अध्याय 3

# सामाजिक असमानता एवं अपवर्जन के प्रतिरूप, जाति पूर्वाग्रह, अनुसूचित जातियाँ, राजस्थान की अनुसूचित जनजातियाँ एवं अन्य पिछड़े वर्ग, महिला समानता का संघर्ष, धार्मिक अल्पसंख्यकों को संरक्षण, नि:शक्तजनों की देखभाल

इस अध्याय में हम मुख्य रूप से समाज के उन वर्गों के बारे में चर्चा करेंगे जो विभिन्न कारणों से समाज की मुख्यधारा से अलग रहे हैं। इस विस्तृत विवेचन के आधार पर हम निम्न बातों को समझ पाएंगे–

- सामाजिक असमानता और अपवर्जन का अर्थ क्या है?
- भारतीय समाज में जाति पूर्वाग्रह की व्याख्या किस प्रकार से की जाती है?
- समाजशास्त्रीय दृष्टि से अनुसूचित जाति और असमानता के विविध पहलू कौनसे हैं?
- राजस्थान की प्रमुख अनुसूचित जनजातियाँ और उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति कैसी है?
- अन्य पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित सामाजिक पक्ष कौन-कौनसे हैं?
- महिला समानता के संघर्ष से क्या तात्पर्य है?
- धार्मिक अल्पसंख्यकों के संरक्षण के विविध आयाम क्या हैं?
- नि:शक्तजनों की देखभाल के विभिन्न प्रावधान क्या हैं?

उपर्युक्त बिन्दुओं पर हम क्रमवार चर्चा करेंगे। इसी क्रम में हम सबसे पहले यह समझ लें कि समाज के विभिन्न समूहों, समुदायों एवं वर्गों में भिन्नता क्यों है? भिन्नता का मूल कारण सामाजिक असमानता है। और सामाजिक असमानता के प्रभाव से कुछ समूह अपवर्जित समूहों की श्रेणी में आ जाते हैं। अत: सामाजिक असमानता के अवधारणात्मक पक्ष को जानना उचित होगा।

## सामाजिक असमानता

यह एक सापेक्ष अवधारणा है। सामाजिक असमानता को समानता एवं बराबरी के आधार पर समझ सकते हैं। अर्थात् सामाजिक परिप्रेक्ष्य से जब हम दो या दो से अधिक इकाइयों की तुलना करते हैं और देखते हैं कि दोनों की विशेषताएँ अलग-अलग हैं तो इसे हम सामाजिक भिन्नता कहते हैं क्योंकि भिन्नता किसी सामाजिक विशेषता पर आधारित होती है। ऐसी भिन्नता जो दो या दो से अधिक इकाइयों की तुलना करने से ज्ञात होती है, इसी को हम सामाजिक असमानता कहते हैं। जैसे हम दो व्यक्तियों को देख कर उनके व्यवहार में सामाजिक असमानता को समझना चाहें तो हमें उनकी सामाजिक पृष्ठभूमि के बारे में जानकारी लेनी होगी। यदि उनमें से एक पुरुष है और दूसरा स्त्री है तो समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह लिंग आधारित असमानता है। इसी प्रकार आवास के आधार पर एक शहर का है और दूसरा गाँव का है तो इसे आवास आधारित असमानता कहेंगे। सामाजिक असमानता के ऐसे कई आधार होते हैं, जैसे आयु, वैवाहिक स्थिति, शिक्षा, व्यवसाय, जाति, धार्मिक मान्यताएँ, भाषा, परिवार की प्रकृति, सामाजिक प्रस्थिति, सामाजिक प्रतिष्ठा, संसाधन एवं सांस्कृतिक पहचान ।स पष्टहै ि कस ामाजिकअ समानताक ाक ोईन क ोईअ ाधार अवश्य होता है। इसी आधार पर एक इकाई को दूसरी इकाई से अलग रूप में जाना जाता है।

हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि जिस किसी भी सामाजिक आधार पर एक इकाई को दूसरी इकाई से भिन्न समझते हैं तो वह इकाई एक व्यक्ति हो सकता है, व्यक्तियों का समूह हो सकता है, परिवार, जाति, वर्ग अथवा सम्पूर्ण समुदाय हो सकता है। इस प्रकार से सामाजिक असमानता का कोई न कोई सामाजिक आधार अनिवार्य रूप से होता है। तथा इसी आधार पर दो या दो से अधिक इकाइयों के बीच तुलना की जाती है।

## सामाजिक अपवर्जन

सामाजिक असमानता के सन्दर्भ में एक अन्य अवधारणा सामाजिक अपवर्जन की है। सामाजिक अपवर्जन को हम एक सामाजिक स्थिति या एक प्रक्रिया के रूप में समझ सकते हैं। जब सामाजिक अपवर्जन को एक सामाजिक स्थिति या दशा कहते हैं तो इसका तात्पर्य है कि कोई समूह समाज की मुख्य धारा से अलग है। वह समाज की मुख्यधारा का भाग नहीं है।

लेकिन जब हम सामाजिक अपवर्जन को एक प्रक्रिया कहते हैं तो इसका अर्थ है कि किसी समूह को समाज की मुख्य धारा से अलग करके सीमान्त स्थिति में पहुँचाया गया है। दूसरे शब्दों में एक समूह जब तक समाज की मुख्य धारा में था तब तक वह अपवर्जन की श्रेणी में नहीं था। जैसे ही मुख्य धारा से अलग किया गया, अपवर्जन की श्रेणी में आ गया। उदाहरण के लिए भारतीय समाज में जाति व्यवस्था पर आधारित उच्चता और निम्नता का क्रम। इस व्यवस्था से पूर्व कोई भी समूह अपवर्जित श्रेणी में नहीं था। लेकिन जाति व्यवस्था के कारण अनुसूचित जाति और अन्य पिछड़ा वर्ग अपवर्जन की श्रेणी में आ गये। इसी प्रकार की स्थिति

जनजातीय समुदाय की है। अर्थात् कतिपय कारणों से समाज के कुछ वर्ग समाज की मुख्य धारा से अलग होकर अपवर्जित श्रेणी के कहलाने लगे। ऐसे वर्गों की पहचान अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में हुई। इसी प्रकार के सामाजिक वर्गों को अपवर्जन के प्रतिरूप कहा जाता है। अपवर्जन के ऐसे प्रतिरूपों की विस्तृत विवेचन हम अब करेंगें।

## जाति पूर्वाग्रह

भारत में जाति व्यवस्था ने अपने अनूठेपन एवं अद्वितीयपन के कारण देशी एवं विदेशी सभी तरह के समाजशास्त्रियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है।

जातिश ाब्दक ीउ त्पत्तिके स म्बन्धम ेंअ नेकल ेखकोंन ेब ड़ी भ्रामक जानकारियाँ उपलब्ध करवाई हैं कि जाति शब्द अंग्रेजी भाषा के 'caste' (कास्ट) शब्द का हिन्दी रूपान्तर है, कास्ट शब्द की उत्पत्ति पुर्तगाली शब्द 'casta' (कास्टा) से हुई है, जिसका अर्थ प्रजाति, नस्ल या जन्म है। एक तरफ हम यह घोषणा करते हैं कि जाति भारतीय सामाजिक संरचना की विशिष्ट संस्था है तथा यह विशुद्ध भारतीय है जो वर्ण से कालान्तर में उत्पन्न हुई है, दूसरी तरफ हम इसकी उत्पत्ति के शब्द अंग्रेजी एवं पुर्तगाली में खोजते हैं, यह बड़ा विरोधाभास है।

जाति शब्द की उत्पत्ति के लिए अध्याय-1 देखिये।

प्रारम्भ में जाति का सम्बन्ध मूल स्वभाव एवं गुणों से रहा है जैसे मानव का स्वभाव मानवता, पशु का पशुता, जल का शीतलता, अग्नि का उष्णता आदि। गुण उच्च एवं निम्न होते हैं, गुण स्थूल एवं सूक्ष्म होते हैं। स्वाभाविकताम ेंग ुणोंक ीउ च्चताए वं िनम्नताके अ ाधारप रज ातीय संस्तरण उत्पन्न हुआ।

प्राचीनतम ऋग्वेद के पुरुष सुक्त (10वें मण्डल) में कहा गया है, विराट पुरुष के मुख से ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रिय, जंघा से वैश्य तथा पाद से शूद्र की उत्पत्ति हुई। इसका अभिप्राय मानव के स्वभाव एवं गुणों से था। जो मानव अपनी आजीविका तथा समाज की सेवा हेतु मुख का सर्वाधिक उपयोग करे वह ब्राह्मण, जो अपने बाहुबल से समाज रक्षा का कार्य करे वह क्षत्रिय, जो शारीरिक श्रम, व्यापार, कृषि आदि कार्यों से समाज हित करे वह वैश्य तथा जो इन सभी की सेवा करते हुए इनकी भूमिकाओं के निर्वहन में सहायता करे, समाज को स्वच्छ, निरोग रखे, वह शूद्र। इनको वर्ण कहा गया। कालान्तर में इन्हीं में और अधिक पेशेगत विभेदीकरण एवं उसके स्थायित्व के कारण विभिन्न जातियाँ अस्तित्व में आई और शनैः शनैः स्वभाव एवं गुण स्थायी होने के कारण यह योग्यता जन्म में बदल गई।

डी.एन. मजूमदार और टी.एन. मदान 'इन इन्ट्रोडक्शन टू सोशल एन्थ्रोपॉलोजी' में 'जाति एक बन्द वर्ग है' कहकर परिभाषित करते हैं। केतकर 'हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इण्डिया' में लिखते हैं कि ''जाति एक सामाजिक समूह है जिसकी दो विशेषताएँ हैं-(1) सदस्यता केवल उन व्यक्तियों तक ही सीमित है जो सदस्यों से जन्म लेते हैं और इस प्रकार पैदा हुए व्यक्ति ही इसमें सम्मिलित होते हैं। (2) सदस्य एक कठोर सामाजिक नियम द्वारा समूह के बाहर विवाह करने से रोक दिए जाते हैं।'' इस प्रकार जाति में अन्तर्विवाह का नियम लागू होता है। साथ ही जाति के साथ व्यवसाय/पेशे जुड़े होते हैं।

प्रत्येक जाति के सदस्य दूसरी जातियों के बारे में कुछ पूर्वाग्रह, धारणाएँ रखते हैं। यद्यपि इनका कोई आनुभाविक सत्यापन नहीं होता है ये पूर्वाग्रह ही आगे चलकर जातिवाद में बदल जाते हैं।

नर्मदेश्वर प्रसाद ने अपनी पुस्तक 'द मिथ ऑफ द कास्ट सिस्टम' में ऐसी अनेक कहावतें बतलाई हैं जिनमें विभिन्न जातियों के सन्दर्भ में पूर्वाग्रह स्पष्ट दृष्टिगत होते हैं। प्रसाद के अनुसार अनेक जातियों के साथ विभिन्न स्थिर रूप जनसाधारण के मानस में उपस्थित हैं। ये स्थिर रूप लोगों की दूसरी जातियों के बारे में परिकल्पना एवं पूर्वाग्रहों के आधार पर निर्मित होते हैं।

भारतीय सामाजिक इतिहास में जातियाँ एक-दूसरी की पूरक एवं पोषक रही हैं, जिनको अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए एक-दूसरी की विरोधी तथा शोषक सिद्ध करने का पुरजोर प्रयास जारी है। लोकतंत्र में संख्या बल के महत्त्वपूर्ण होने के कारण अनेक जातियों को राजनीतिक दलों द्वारा स्थायी वोट बैंक बनाने के लिए 'आरक्षण' का लाभ प्रदान किया गया, परिणामस्वरूप पिछड़ेपन की प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हो गई, साथ ही आरक्षित एवं अनारक्षितों में एक-दूसरे के प्रति घृणा, विद्वेष तथा संघर्ष की स्थितियाँ सृजित हुई हैं। इन स्थितियों ने जातियों के मध्य एक-दूसरे के प्रति पूर्वाग्रहों को और अधिक बल प्रदान किया है।

## अनुसूचित जातियाँ

अध्याय-1 में अनुसूचित जातियों को परिभाषित किया गया है। भारत में जनगणना 2011 के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या का 16.6 फीसदी अनुसूचित जातियों की आबादी है। वे लोग जो सफाई करने, मैला ढोने तथा चमड़ा साफ करने के काम में लगे होते हैं, लगभग अनुसूचित जाति में सम्मिलित हैं। अनुसूचित जाति के लगभग आधे लोग मजदूरी करते हैं। इनमें चमड़े का काम, जुलाहे का, मछुआरे का, डोडे चुनने का, रस्सी व टोकरी बनाने का, धोबी का, शिल्पी का, सफाई का, जूता बनाने का, फल व सब्जी बेचने का, बढ़ई तथा लुहार का, ढोल बजाने का, शराब बनाने का आदि कार्य करते हैं। अनुमानतः कुल बन्धुआ मजदूरों में से दो-तिहाई बन्धुआ मजदूर अनुसूचित जाति के ही हैं। ये अधिकतर गरीबी-रेखा से नीचे का जीवन जीते हैं और आर्थिक तथा सामाजिक शोषण के शिकार हैं।

अनुसूचित जातियों के साथ असमानता का व्यवहार परम्परागत तौर पर किया जाता है। वे समाज की मुख्यधारा से कटी हुई रहती हैं। भेदभावपूर्ण स्थितियों के कारण इन्हें जीवन में आगे बढ़ने और अपने व्यक्तित्व के विकास के उचित अवसर नहीं मिले। असमानता तथा अपवर्जन का कारण इन जातियों पर लादी गई निर्योग्यताएँ हैं, जो

परम्परागत सामाजिक व्यवस्था का हिस्सा रही हैं। ये निम्नवत हैं–

**1. अनुसूचित जातियों की धार्मिक निर्योग्यताएँ–**

(i) पूर्व में अनुसूचित जातियों को अपवित्र माना गया। मन्दिर, नदी-घाटों तथा पवित्र स्थानों पर जाने की रोक लगाई गयी।

(ii) इनको पूजा, आराधना के अधिकार से वंचित किया गया। ब्राह्मणों ने इनको सेवा प्रदान करने से वंचित रखा।

(iii) हिन्दू धर्म के सोलह संस्कारों को पूरा करने के अधिकार से वंचित किया गया।

**2. सामाजिक निर्योग्यताएँ–**

(i) उच्च जातियों के साथ सम्पर्क रखने एवं उनके साथ खान-पान पर प्रतिबन्ध।

(ii) अन्य जातियों के कुओं से पानी भरने, उनके साथ रहने, अच्छे वस्त्र एवं स्वर्णाभूषण पहनने पर रोक।

(iii) शिक्षा से वंचित रखा गया।

(iv) अनुसूचित जातियों के अन्दर स्वयं में भी ऊँच-नीच का भेद विद्यमान है।

**3. आर्थिक निर्योग्यताएँ–**

(i) ये लोग सामान्यत: गाँव में भूमिहीन श्रमिक के रूप में कार्य करते हैं। मल-मूत्र उठाने, सफाई करने, मरे हुए पशुओं को उठाने, चमड़े का कार्य करने के व्यवसाय तक ही इनको सीमित कर दिया गया।

(ii) इन्हें श्रम के बदले न्यून पारितोषिक अथवा प्रतिफल दिया गया है, जिसका निर्धारण ये स्वयं नहीं कर पाते थे।

**4. राजनीतिक निर्योग्यताएँ–** परम्परागत भारतीय समाज में इन्हें सभी प्रकार के अधिकारों से वंचित रखा गया तथा सामान्य अपराध के लिए इनके लिए कठोर दण्ड की व्यवस्था थी।

ये सभी निर्योग्यताएँ मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था का भाग थीं। स्वतन्त्रता के पश्चात् इन सभी का निर्मूलन कर दिया गया है। वर्तमान में जो समस्याएँ तथा असमानता/निर्योग्यताएँ हैं, वे आर्थिक हैं। अब धार्मिक, राजनीतिक एवं सामाजिक तौर पर निर्योग्यताएँ समाप्त प्राय: हो गई हैं। स्वतंत्र भारत के संविधान में कानूनी प्रावधानों तथा सभी के लिए समान अधिकारों के प्रावधान से असमानता एवं अपवर्जन की स्थितियों में काफी सुधार हुआ है। अनुसूचित जातियों में एक नवीन प्रकार की असमानता इनके अन्दर प्रकट हुई है, वह है इनमें वर्गभेद उत्पन्न होना। जिन परिवारों ने उच्च शिक्षा ग्रहण कर उच्च पद प्राप्त कर लिए हैं, सरकारी योजनाओं का लाभ उठाकर अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ कर ली है, वे स्वयं को अन्यों की तुलना में उच्च समझने लगे हैं।

यद्यपि 21वीं सदी के भारतीय समाज में अनुसूचित जातियों की प्रस्थिति में काफी सुधार हुआ है, फिर भी पीढ़ियों तक शोषित, प्रताड़ित लोगों के साथ आज भी समय-समय पर कुछ असम्मानजनक व्यवहार की घटनाएँ भारत के विभिन्न भागों से सुनाई देती हैं। इसका एक प्रमुख कारण अनुसूचित जाति में अपने अधिकारों की प्रति चेतना का उत्पन्न होना भी है।

भारत के संविधान की धारा 341 के अन्तर्गत भारत सरकार द्वारा प्रत्येक राज्य एवं संघ राज्य के लिए अनुसूचित जातियों को अधिसूचित किया गया है–

## राजस्थान की अनुसूचित जनजातियाँ एवं अन्य पिछड़े वर्ग

**इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया** के अनुसार, ''एक जनजाति परिवारों का एक संकलन है, जिसका एक नाम है, जो एक बोली बोलती है, एक सामान्य भू-भाग पर अधिकार रखती है या अधिकार बताती है और जो अन्तर्विवाही रही है, चाहे अब अन्तर्विवाही न हो।''

गोविन्द सदाशिव घुर्ये ने 'भारतीय जनजातियों को पिछड़े हिन्दू' माना है। वे वेरियर एल्विन की 'नेशनल पार्क की नीति' (अलग-थलग की नीति) तथा जवाहर लाल नेहरू की 'एकीकरण नीति' (आरक्षण एवं विकास) से भिन्न 'आत्मसात की नीति' पर जोर देते हैं। घुर्ये का मानना है कि इनके पिछड़ेपन का कारण उनका हिन्दू समाज से पूरी तरह एकीकृत न होना रहा है।

भारत की जनगणना 2011 के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या में जनजातीय आबादी 8.61 प्रतिशत है। राजस्थान में जनजातीय जनसंख्या 92,38,534 है जो कुल आबादी (6,85,48,437) का 13.48 प्रतिशत है। सन् 1961 की जनगणना के अनुसार राजस्थान में 23,09,447 जनजातीय लोग निवास करते थे जो राजस्थान की कुल जनसंख्या का 11.2 प्रतिशत था।

| जनगणना वर्ष | जनजातीय आबादी (राज.) का प्रतिशत | राजस्थान में जनसंख्या |
|---|---|---|
| 1961 | 11.2 | 23,09,447 |
| 1971 | 12.13 | 31,35,392 |
| 1981 | 12.21 | 41,83,124 |
| 1991 | 12.44 | 54,74,881 |
| 2001 | 12.56 | 70,98,000 |
| 2011 | 13.48 | 92,38,534 |

राजस्थान में सर्वाधिक जनजातीय आबादी उदयपुर जिले में है, फिर क्रमश: बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, जयपुर तथा सवाई माधोपुर जिलों में। राजस्थान में सर्वाधिक आबादी मीणा जनजाति की है। उसके बाद क्रमश: भील, गरासिया, सहरिया, भील-मीणा, डामोर व डमारिया की है।

अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ आदेश (संशोधन) अधिनियम, 1976के अनुसार राजस्थान में अधिसूचित जनजातियों की सूची–

1. भील, भील गरासिया, ढोली भील, डूंगरी भील, डूंगरी गरासिया,

| क्र.सं. | राज्य/संघ राज्य | अधिसूचित की गई अनुसूचित जाति की संख्या |
|---|---|---|
| 1. | जम्मू और कश्मीर (संविधान, जम्मू एवं कश्मीर अनूसूचित जाति आदेश, 1956) | 13 |
| 2. | हिमाचल प्रदेश (अनूसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आदेश, संशोधन अधिनियम, 1976) | 56 |
| 3. | पंजाब (अधिनियम 1976) | 37 |
| 4. | चण्डीगढ़ (अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति सूची (उपांतरण) आदेश 1956 तथा 1966 के अधिनियम सं. 31 द्वारा परिवर्धित) | 36 |
| 5. | उत्तरांचल (अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976 तथा 2000 के अधिनियम सं. 29 द्वारा यथा अन्त:स्थापित) | 65 |
| 6. | दिल्ली [अजा और अजजा सूची (उपान्तरण) आदेश, 1956] | 36 |
| 7. | हरियाणा [अजा और अजजा आदेश (संशोधन) अधिनियम, 1976] | 37 |
| 8. | राजस्थान [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम, 1976] | 59–(i) आदिधर्मी (ii) अहेरी (iii) बादी (iv) बागरी, बागदी (v) बैरवा, बेरवा (vi) बाजगर (vii) बलाई (viii) बांसफोर, बांसफोड़ (ix) बाओरी (x) बार्गी, वार्गी, बिर्गी (xi) बावरिया (xii) बेड़िया, बेरिया, (xiii)भ ंड (xiv)भ ंगी,च ूड़ा,म ेहतर,अ ैलगाना,रू खी,म लकाना, हलालखोर, लालबेगी, वाल्मीकि, वाल्मीकि, कोरार, झाड़माली, (xv) बिदकिया (xvi) बोला (xvii) चमार, भांभी, बांभी, भांबी, जटिया, जाटव, जाटवा, मोची, रैदास, रोहिदास, रैगड़, रेगड़, रामदासिया, असादरु, असोदी, चमादिया, चम्भार, चामगर, हरलथ्या, हराली, खलपा, माचीगर, मोचीगर, मदार, मादिग, तेलुगु-मोची, कामटी मोची, रानीगर, रोहित सामगर (xviii) चांडाल (xix) दबगर (xx) धानका, धानुका (xxi) धनकिया (xxii) धोबी (xxiii) ढोली (xxiv) डोमे, डोम (xxv) गांडिया (xxvi) गरांचा, गांचा (xxvii) गारो, गरूरा, गुर्डा, गरडा (xviii) गवारिया (xxix) गोधी (xxx) जीनगर (xxxi) कालबेलिया, सपेरा (xxxii) कामड़, कामड़िया (xxxiii) कंजर, कुंजर (xxxiv) कापड़िया, सांसी (xxxv) खंगार (xxxvi) खटीक (xxxvii) कोली, कोरी (xxxviii) कूचबन्द, कुचबन्द (xxxix) कोरिया (xl) मदारी, बाजीगर (xli) महार, तरल धेगुमेगु (xlii) माह्यावंशी, धेड़, धेड़ा, वंकर, मारु वंकर (xliii) मजहबी (xliv) मांग, मातंग, मिनिमादिग (xlv) मांग गारोडी, भांडा गारुड़ी (xlvi) मेघ, मेघवल, मेघवाल, मेंघवार (xlvii) मेहर (xlviii) नट, नुट (xlix) पासी (l) रावल (li) सालवी (lii) सांसी (liii) सांतिया, सतिया (liv) सरभंगी (lv) सरगरा (lvi) सिंगीवाला (lvii) थोरी, नायक (xlviii) तीरगर, तीरबन्द (lix) तूरी। |
| 9. | उत्तर प्रदेश [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम, 1976] | 66 |
| 10. | बिहार (अजा और अजजा आदेश संशोधन अधिनियम 1976) | 23 |
| 11. | सिक्किम (संविधान, सिक्किम अजा आदेश 1978) | 04 |

| | | |
|---|---|---|
| 12. | अरुणाचल प्रदेश (अजा और अजजा सूची (उपान्तरण) आदेश 1956तथा 1986के अधिनियम सं. 69 द्वारा यथा अन्त:स्थापित) | 16 |
| 13. | मणिपुर [अजा और अजजा आदेश (संशोधन) अधिनियम, 1976 | 07 |
| 14. | मिजोरम [अजा और अजजा सूची (उपान्तरण) आदेश, 1956 तथा 1971 के अधिनियम सं. 81 द्वारा यथा अन्त: स्थापित] | 16 |
| 15. | त्रिपुरा [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 32 |
| 16. | मेघालय [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 16 |
| 17. | असम [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 16 |
| 18. | पश्चिम बंगाल [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 59 |
| 19. | झारखण्ड (अजा और अजजा आदेश संशोधन अधिनियम, 1976 तथा 2000 के अधिनियम संख्या 30 द्वारा यथा अन्त:स्थापित) | 22 |
| 20. | उड़ीसा [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 93 |
| 21. | छत्तीसगढ़ (अजा और अजजा आदेश संशोधन, 1976तथा 2000 के अधिनियम संख्या 28द्वारा यथा अन्त:स्थापित) | 43 |
| 22. | मध्य प्रदेश [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 47 |
| 23. | गुजरात [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 30 |
| 24. | दमन और दीव [संविधान (गोवा, दमन और दीव) अनुसूचित जाति आदेश, 1968] | 05 |
| 25. | दादर और नागर हवेली [संविधान (दादरा और नागर हवेली) अनुसूचित जाति आदेश, 1962] | 04 |
| 26. | महाराष्ट्र [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 59 |
| 27. | आन्ध्र प्रदेश [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 59 |
| 28. | कर्नाटक [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 101 |
| 29. | गोवा [संविधान (गोवा, दमन और दीव) अजा और अजजा आदेश, 1968] | 05 |
| 30. | केरल [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 68 |
| 31. | तमिलनाडु [अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदेश (संशोधन) अधिनियम 1976] | 76 |
| 32. | पाण्डिचेरी [संविधान (पाण्डिचेरी) अनुसूचित जाति, 1964] | |

स्त्रोत–भारत की जनगणना, 2011

मेवासी भील, रावल भील, तडवी भील, भगालिया, भिलाला, पावरा, वसावा, वसावे

2. भील मीना
3. डामोर, डामरिया
4. धनका, तड़वी, तेतारिया, वलवी
5. गरासिया (राजपूत गरासिया सम्मिलित नहीं)
6. काथोडी, कातकरी, ढोर काथोडी, ढोर कातकरी, सोन काथोडी, सोन कातकरी
7. कोकना, कोकनी, कुकना
8. कोली ढोर, टोकरे कोली, कोलचा, कोलघा
9. मीना
10. नाथकडा, नायका, चोलीवाला नायका, कापड़िया नायका, मोटा नायका, नाना नायका
11. पटेलिया
12. सेहारिआ, सेहरिआ, सहरिया

**स्त्रोत :** भारत की जनगणना, 2001

इस प्रकार राजस्थान में 12 जनजातीय समूह निवास करते हैं। जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान का देश में पाँचवाँ स्थान है।

राजस्थान में जनजातियों की भौगोलिक बसावट के सन्दर्भ में निम्न तथ्य अवलोकनीय हैं–

1. जनजाति के लोग रियासत काल में देशी रियासतों के सीमावर्ती क्षेत्रों में रहते थे।
2. जनजातियों के निवास के क्षेत्र से अन्य क्षेत्रों का सम्पर्क यातायात एवं आवागमन के साधनों से परम्परागत रूप से वंचित रहे हैं।
3. वर्तमान उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की प्रक्रियाओं का प्रभाव जनजातियों में आंशिक ही दिखाई पड़ता है।
4. जनजातीय क्षेत्र नगरीकरण के प्रभाव से भी अंशत: ही प्रभावित हुए हैं।
5. यद्यपि राज्य एवं केन्द्र सरकार के योजनागत विकास एवं जनजाति विकास की विशिष्ट योजनाओं के चलते ढाँचागत विनिर्माण प्रारम्भ हुआ है, परन्तु अभी तक योजनाएँ बिचौलियों की नकारात्मक भूमिकाओं के चलते अपने वांछित लक्ष्यों से कोसों दूर हैं।
6. विषम भौगोलिक बसावट एवं अन्य लोगों से दूरी बनाए रखने की प्रवृत्ति स्वरूप जनजातीय लोग सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने में असफल रहे हैं।

7. संभरणात्मक आर्थिक व्यवस्था एवं रूढ़िगत सामाजिक ढाँचे ने जनजाति के लोगों को शिक्षा एवं तकनीक से दूर रखा।

राजस्थान में जनजातियों के निवास स्थान का भौगोलिक वर्गीकरण करने पर जनजातीय निवास के तीन क्षेत्र बनते हैं–

**(अ) दक्षिणी राजस्थान–** बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, प्रतापगढ़, उदयपुर जिले की सात तहसील तथा सिरोही जिले की आबू रोड तहसील आदि इस क्षेत्र में सम्मिलित हैं। राज्य की जनजातीय आबादी का लगभग 45 फीसदी इस भू-भाग में निवास करता है। दक्षिणी राजस्थान के इस क्षेत्र में प्रमुखत: भील, मीणा, गरासिया तथा डामोर आदि जनजातियाँ निवास करती हैं।

**(ब) पश्चिमी राजस्थान–** राजस्थान के इस भू-भाग में बारह जिले अवस्थित हैं। गंगानगर, हनुमानगढ़, बीकानेर, जोधपुर, बाड़मेर, जालौर, पाली, जैसलमेर, नागौर, चूरू, सीकर तथा झुंझुनूं जिलों में राज्य कीक ु लज नजातीयज नसंख्याक 17 फ ीसदीभ ागि नवासक रताह ै। मुख्यत: इन जिलों में भील एवं मीणा जनजातियाँ निवास करती हैं।

**(स) उत्तर-पूर्वी राजस्थान–** अलवर, भरतपुर, जयपुर, सवाई माधोपुर, करौली अजमेर, टोंक, भीलवाड़ा, बूँदी, कोटा, बाराँ, दौसा, झालावाड़, धौलपुर, चित्तौड़गढ़ जिले, उदयपुर एवं सिरोही जिले का कुछ क्षेत्र इस भू-भाग में अवस्थित है, जिसमें राज्य की लगभग आधी जनजातीय आबादी निवास करती है। प्रमुखत: भील, मीणा, सहरिया एवं भील-मीणा जनजातियाँ इस क्षेत्र में निवास करती हैं।

## अन्य पिछड़े वर्ग

अन्य पिछड़े वर्ग भी अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के साथ पिछड़े हुए ही माने जाते हैं, जो भारत की कुल जनसंख्या के एक-तिहाई हैं। अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के बारे में हम पूर्व में विचार कर चुके हैं। यहाँ हम अन्य पिछड़े वर्गों के बारे में विचार करेंगे, जो समाज के कमजोर वर्ग की श्रेणी में आते हैं।

**अन्य पिछड़े वर्ग : अर्थ –** पिछड़ा वर्ग शब्द समाज के कमजोर वर्गों विशेषकर अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों व अन्य पिछड़े वर्गों के सन्दर्भ में प्रयोग किया जाता है। भारतीय संविधान के भाग 16 तथा अन्य कुछ प्रावधानों में **'पिछड़े वर्गों'** या अनुसूचित जातियों और जनजातियों के साथ **'अन्य पिछड़े वर्गों'** शब्द का प्रयोग किया गया है। सामान्यत: पिछड़े वर्गों में अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, छोटे किसानों, सीमान्त किसानों, खेतिहर मजदूरों इत्यादि को शामिल किया जाता है। भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के सामाजिक, शैक्षणिक, आर्थिक व राजनीतिक कल्याण के लिए अनेक प्रावधान किये गये हैं। उनके लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है, पिछड़े वर्गों के लिए शिक्षा व रोजगार के क्षेत्र में केवल विशेष प्रावधान ही किये गये थे। आरक्षण की व्यवस्था नहीं की गई थी, जो अब कर दी गई है।

पिछड़े वर्ग की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है, केवल उनका अर्थ स्पष्ट किया गया है। फिर भी विभिन्न आयोगों द्वारा पिछड़ा वर्ग किसे कहा गया है और उनके लिए किन-किन कसौटियों एवं आधारों को अपनाया गया है, उनकी चर्चा करेंगे।

सर्वप्रथम पिछड़े वर्ग शब्द का प्रयोग सन् 1917-18 और इसके बाद सन् 1930-31 में किया गया। सन् 1934 में मद्रास (चेन्नई) में प्रान्तीय स्तर के पिछड़े वर्ग की स्थापना की गई। इनमें 100 से अधिक जातियों को शामिल किया गया, जिनकी कुल जनसंख्या मद्रास में लगभग 50 प्रतिशत थी। सन् 1937 में ट्रावनकोर राज्य ने उन सभी समुदायों के लिए 'पिछड़े समुदाय' शब्द का प्रयोग किया, जो आर्थिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े थे। बिहार में सन् 1947 में पिछड़े वर्ग महासंघ की स्थापना की गई तथा बिहार सरकार ने अन्य पिछड़े वर्ग के छात्रों के लिए मैट्रिक के बाद अध्ययन हेतु कुछ सुविधाओं की घोषणा की।

राजनीतिक कोश में पिछड़े वर्गों को इस प्रकार परिभाषित किया है, ''पिछड़े वर्गों का अभिप्राय समाज के उन वर्गों से है, जो सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक निर्योग्यताओं के कारण समाज के अन्य वर्गों की तुलना में नीचे स्तर पर हों।'' यद्यपि संविधान में इस शब्द समूह का अनेक स्थानों पर प्रयोग हुआ है (अनुच्छेद 16(4) तथा 340 में) परन्तु इसकी परिभाषा कहीं नहीं दी गई है। संविधान में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के समान इनके लिए आरक्षण की व्यवस्था भी नहीं की गई है। परन्तु शिक्षा एवं रोजगार क्षेत्र में पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्था की गई है।

आन्द्रे बिताई कृषक वर्ग को पिछड़े वर्गों का सार मानते है। जाति के सन्दर्भ में पिछड़े वर्ग मध्यम कृषक एवं व्यवसायी जातियाँ हैं, जो शिक्षा व नौकरियों में उच्च जातियों से पीछे रह गये।

सन् 1948 में उत्तर प्रदेश सरकार ने राज्य की 26 जातियों के लिए, जिनकी जनसंख्या राज्य की कुल जनसंख्या की 65 प्रतिशत थी, उन्हें शिक्षा की सभी सुविधाएँ देने की घोषणा की। सन् 1954 में देश के 15 राज्यों में पिछड़े वर्गों के लगभग 88 संगठन स्थापित हो चुके थे, जिनमें कुछ ने अपना नामकरण जाति के आधार पर किया तथा स्थानीय व क्षेत्रीय आधार पर कार्य करने लगे। सन् 1950 में पहली बार अखिल भारतीय स्तर पर 'अखिल भारतीय पिछड़ा वर्ग महासभा' की स्थापना की गई। कई राज्य सरकारों ने भी पिछड़े वर्गों की सूचियाँ बनवाईं। कर्नाटक राज्य की सूची में मुसलमान, ईसाई, जैन, सभी गैर-ब्राह्मण जातियों को इस सूची में शामिल किया गया। महाराष्ट्र एवं तमिलनाडु सरकार की सूचियों में गैर-ब्राह्मण उच्च जातियों को इसमें शामिल नहीं किया गया। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग ने पिछड़े वर्ग के छात्रों के लिए अनुपात के आधार पर महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में आरक्षण की बात की।

आन्द्रे बिताई ने कृषि करने वाली जातियों को पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत शामिल किया। कुछ लोगों का मत है कि केवल शूद्र वर्ग के लोगों को ही पिछड़ा वर्ग माना जाना चाहिए। समाज में जब हम यह कहते हैं कि अमुक वर्ग पिछड़ा वर्ग है, इसका मतलब ये है कि समाज में एक वर्ग ऐसा

भी है, जो इनसे उच्च है। इस अर्थ में समाज में उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग की दो परस्पर विरोधी धारणाएँ बन गईं। उच्च वर्ग में जमींदारों एवं उच्च जातियों को लिया जाता है तथा निम्न वर्ग में निम्न जातियों एवं खेतिहर मजदूरों को। भारत में अधिकांश कृषि करने वाली जातियाँ मध्यम श्रेणी की हैं, अत: जाति व व्यवसाय दोनों ही दृष्टिकोणों से पिछड़े वर्ग के लोग मध्यम स्तर के हैं तथा सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

पिछड़े वर्ग में उन सभी समूहों को शामिल किया गया है, जो शिक्षा, व्यवसाय, व्यापार, राजकीय सेवाओं में उच्च वर्गों से पीछे हैं। इनके जीवन-यापन का मुख्य आधार कृषि होता है।

भारतीय इतिहास में पिछड़ा वर्ग उसे माना गया है जो सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हैं। संविधान की धारा 340 में भारत के राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वह एक आयोग की नियुक्ति कर देश के विभिन्न भागों में स्थित पिछड़े वर्गों की स्थिति का जायजा ले। धारा 15(4) और 16 के अन्तर्गत राज्य सरकारें भी आयोग का गठन कर रिपोर्टों के आधार पर सरकारी सेवाओं एवं शैक्षिक संस्थाओं में आरक्षण का प्रावधान कर सकती हैं। परन्तु पिछड़ेपन को आँकने का कोई अखिल भारतीय पैमाना नहीं है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि पिछड़ा वर्ग समाज का वह भाग है, जो सामाजिक, शैक्षणिक व आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। जो मुख्यत: कृषि द्वारा जीवन-यापन करता है। पिछड़ापन व्यक्ति नहीं अपितु समूह का एक लक्षण है। मण्डल आयोग ने पिछड़ेपन के तीन आधार माने हैं-सामाजिक, शैक्षिणिक व आर्थिक।

**मण्डल आयोग** (Mandal Commission)– 1977 के लोकसभा चुनावों में जनता पार्टी ने अपने चुनाव घोषणा पत्र में सरकारी व शैक्षणिक सेवाओं में 25 से 33% तक पिछड़े वर्गों के आरक्षण की बात कही थी। जब जनता पार्टी केन्द्र की सत्ता में आई तो उसने **वी.पी. मण्डल** की अध्यक्षता में पिछड़े वर्गों के लिए एक आयोग का गठन किया, जो मण्डल आयोग के नाम से जाना जाता है। इस आयोग को केन्द्र सरकार द्वारा निम्न कार्य दिये गये-

1. सामाजिक व शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की परिभाषा हेतु कसौटियाँ तय करना।
2. पिछड़े वर्गों के उत्थान हेतु क्या कदम उठाये जायें, इस बारे में सुझाव देना।
3. केन्द्र, राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों में पिछड़े वर्गों के अपर्याप्त प्रतिनिधित्व के कारण आरक्षण की सुविधाओं की सम्भावनाओं का पता लगाना।
4. संकलित तथ्यों के आधार पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करना एवं सिफारिशें करना।

30 अप्रैल, 1982 को आयोग ने अपनी रिपोर्ट भारत सरकार को प्रस्तुत की। आयोग ने सरकारी एवं गैरसरकारी सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लिए 27 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने का सुझाव दिया। आयोग ने देश की 3,743 जातियों को पिछड़ी जातियाँ घोषित किया, जिनकी जनसंख्या देश की कुल आबादी का 52 प्रतिशत है। आयोग ने 52 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने की बात कही, परन्तु संविधान की धारा 14(4) और 16(4) के अनुसार 50 प्रतिशत से अधिक स्थान आरक्षित नहीं किया जा सकता तथा 22.5 प्रतिशत स्थान पहले से ही अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित है। अत: संविधान के प्रावधानों के कारण पिछड़ी जातियों के लिए सरकारी सेवाओं एवं शिक्षण संस्थाओं में 27 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने की सिफारिश की गई। आयोग ने सभी स्तरों पर पदोन्नति के लिए भी 27 प्रतिशत स्थान आरक्षित करने की सिफारिश की। आयोग ने यह भी कहा कि आरक्षण के कोटे को तीन वर्ष की अवधि के लिए आगे बढ़ा दिया जाए। उसके बाद ही स्थान न भरने पर आरक्षण कोटे से हटाया जाए। आयोग ने पिछड़े वर्ग की सूचियाँ बनाने एवं आयु-सीमा में भी छूट देने की सिफारिश की। पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों, बैंकों, सरकारी सहायता प्राप्त निजी प्रतिष्ठानों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में भी लागू करने की बात कही और यह भी कहा कि इन सिफारिशों को लागू करने के लिए कानूनी प्रावधान भी किए जाएँ। आयोग ने यह भी कहा कि पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए उसी प्रकार की वित्तीय सहायता दी जाए, जिस प्रकार की अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के उत्थान के लिए दी जाती हैं। आयोग ने पिछड़े जातियों के लिए प्रौढ़ शिक्षा का प्रसार करने एवं इस वर्ग के छात्रों के लिए आवासीय छात्रावास बनाने की भी सिफारिश की।

30 अप्रैल, 1982 को मण्डल आयोग की रिपोर्ट आने के बाद तत्कालीन केन्द्र सरकार से इसकी सिफारिश को क्रियान्वित करने की माँग की जाती रही। 1989 में नवीं लोकसभा के चुनाव में जनता दल द्वारा अपने घोषणा-पत्र में मण्डल आयोग की रिपोर्ट को लागू करने का वादा किया। चुनाव बाद केन्द्र में विभिन्न दलों को मिलाकर राष्ट्रीय मोर्चा सरकार का गठन किया गया और प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह को बनाया गया। 7 अगस्त, 1990 को तत्कालीन प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने संसद में पिछड़े वर्गों के लिए सामाजिक न्याय की दुहाई देकर 27 प्रतिशत आरक्षण की घोषणा की तथा इस आशय की सरकारी अधिसूचना जारी कर दी।

इस घोषणा की प्रतिक्रिया देश के विभिन्न भागों में हुई। स्कूल व कॉलेजों में हड़ताल होने लगी तथा देशभर में एक महीने की अवधि में 160 छात्रों ने इसके विरोध में अपने प्राणों की आहुति दे दी। कई स्थानों पर 'मण्डल विरोधी मंच', 'मण्डल विरोधी संघर्ष वाहिनी' तथा 'समता मंच' के नाम से इसका विरोध करने के लिए संगठन बने। कई स्थानों पर आयोग के समर्थकों एवं विरोधियों में संघर्ष भी हुए। अक्टूबर, 1990 को मण्डल आयोग की सिफारिशों के क्रियान्वयन पर न्यायालय द्वारा स्थगन आदेश जारी किया गया।

16 नवम्बर, 1992 को सर्वोच्च न्यायालय ने पिछड़ी जातियों के

लिए किये गए 27 प्रतिशत आरक्षण को उचित ठहराया। साथ ही यह भी कहा कि इन जातियों के सम्पन्न लोगों (Creamylayer) को आरक्षण का लाभ नहीं दिया जाना चाहिए। केन्द्र सरकार ने 8 सितम्बर, 1993 से तथा उत्तर प्रदेश सरकार ने दिसम्बर, 1993 से 27 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था पिछड़े वर्गों के लिए लागू कर दी। मध्य प्रदेश में पिछड़े वर्गों के लिए 14 प्रतिशत आरक्षण किया गया। राजस्थान सरकार ने 1994 से 21 प्रतिशत आरक्षण व्यवस्था पिछड़े वर्गों हेतु लागू कर दी। 14 अगस्त, 1993 को केन्द्र सरकार द्वारा 'राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग' गठित किया गया, जो अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में नाम शामिल करने या हटाने के सन्दर्भ में शिकायतें सुनने का कार्य करता है। 13 अक्टूबर, 1994 से अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों को सरकारी सेवाओं में उनकी पात्रता होने पर ऊपरी आयु सीमा में 3 वर्ष की छूट दी गई। लिखित परीक्षा एवं साक्षात्कार के मानदण्डों में छूट दी गई। इन्हें सिविल सेवा परीक्षा में शामिल होने के सात अवसर प्रदान करने के निर्देश दिये गये। केन्द्र सरकार ने अन्य पिछड़े वर्गों में जाटों को भी शामिल कर लिया है।

विभिन्न राज्यों में पिछड़े वर्गों के लिए दिए गए आरक्षण की स्थिति इस प्रकार है–कर्नाटक में 40 प्रतिशत, आंध्र प्रदेश में 25 प्रतिशत (अब तेलंगाना व आन्ध्र प्रदेश), केरल में 25 प्रतिशत, बिहार में 26 प्रतिशत, महाराष्ट्र में 14 प्रतिशत, उत्तर प्रदेश में 58 पिछड़ी जातियों को 15 प्रतिशत, जम्मू-कश्मीर में 40 प्रतिशत तथा राजस्थान में 52 जातियों को 21 प्रतिशत आरक्षण प्राप्त है। राजस्थान सरकार ने क्रीमीलेयर की आय सीमा ढाई लाख रुपये कर दी है। राज्य सरकार ने सरकारी नौकरियों, स्थानीय निकायों एवं पंचायतीराज संस्थाओं में भी 21 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की है, जिसके अन्तर्गत राज्य की लगभग 42.5 प्रतिशत जनसंख्या सम्मिलित है। मेव, पीटल, सिंधी, भोमिया एवं कुछ राजपूत जातियों को भी पिछड़े वर्गों में शामिल करने के प्रयास चल रहे हैं।

## महिला समानता का संघर्ष

हम सभी का यह विश्वास है कि किसी भी समाज के अध्ययन का अपरिहार्य अंग स्त्री और पुरुष समान रूप से है। अत: समाजशास्त्र के अध्ययन का केन्द्र दोनों को समान प्राथमिकता देते हुए होता है। लेकिन परिवार और नातेदारी विशेषकर नातेदारी की संपूर्ण संरचना और प्रक्रिया को हम पुरुष को प्रधान मान कर अध्ययन करते हैं। समाजशास्त्रीय अध्ययनों में जहाँ लोगों के जीवन का प्राथमिक अवलोकन किया जाता है वहाँ स्त्रियों की प्रतिभागिता एवं गतिविधियों का महत्व शून्य होता है। मैलिनोवस्की, रैडक्किल ब्राउन जैसे आरंभिक मानवविज्ञानियों ने महिलाओं की भूमिका को कम करके आँका था। इन सभी ने मुख्यत: पुरुषों पर ही अपने अध्ययन को केन्द्रित किया था। उन्होंने सामुदायिक जीवन पर ही नहीं बल्कि समुदाय ने महिलाओं की भूमिका से सम्बन्धित जानकारी भी गाँव के पुरुषों से ही जुटाई। कमोबेश भारतीय संदर्भों में आज भी यह परम्परा देखी जा सकती है। ऐसे कई शोध जो कि स्वयंसेवी संगठनों, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों यहाँ तक कि सरकारी एजेंसियों द्वारा किये गये हैं, बताते हैं कि भारतीय स्त्रियाँ, कामगार नहीं है या हैं तो उनकी संख्या नाममात्र की है। शोध के यह निष्कर्ष संदेहास्पद इसलिए हैं कि हम खुली आँखों से इस सत्य को देखते हैं कि पारिवारिक दायित्वों के अलावा भारतीय स्त्रियाँ विशेषकर ग्रामीण अंचलों से सम्बन्ध रखने वाली कृषि कार्य से लेकर शारीरिक श्रम के अन्यत्र जाकर काम करती हैं। इन निष्कर्षों का कारण स्पष्ट है कि शोध के उत्तरदाता अधिकांशत घर के पुरुष सदस्य ही होते हैं जिनकी दृष्टि में कृषि भूमि में बीजारोपण से लेकर फसल काटने जैसे कार्य या फिर घर में ही सूक्ष्म रूप से किये जाने वाली आर्थिक गतिविधियाँ यथा सिलाई, कढ़ाई, बुनाई आदि जिनसे परिवार की महिलाएँ धन कमाती हैं 'कामकाज' में नहीं आता। सुस्पष्ट तौर पर श्रम उसे माना जाता है जो घरेलू परिधि में ही नहीं अपितु देश की अर्थव्यवस्था में सीधे तौर पर 'अर्थ लाभ' दे। काम करने से हमारा मतलब उस काम से ही होता है जहाँ संगठित क्षेत्र में नकद भुगतान किया जाता है। दरअसल वे सामाजिक प्रक्रियाएँ और नीतियाँ जो समाज के विश्लेषण के लिये अपनाई गई है वे विशुद्ध रूप से स्त्री और पुरुष के मध्य भेद करती है।

महिला समानता के संघर्ष में विस्तारपूर्वक चर्चा करने से पूर्व यह विश्लेषण इसलिए आवश्यक था कि जिस स्त्री को समाज में अपने दोयम दर्जे से मुक्ति पाने के लिये संघर्ष करना पड़ रहा है उसे यह विदित भी नहीं होगा कि सामाजिक संरचना की मूल इकाइयों में उसकी भूमिका समाज वैज्ञानिकों द्वारा अध्ययन का केन्द्र बिन्दु नहीं बन पाई है। ऐसे में यह कल्पना करना सहज है कि जनसाधारण के मानस में आधी आबादी की भूमिका क्यों महत्वपूर्ण नहीं है।

## महिला समानता और सामाजिक अवरोध

एक लम्बे समय तक यह विश्वास किया जाता था कि स्त्री और पुरुष के शारीरिक भेद का उसमें विद्यमान भावनात्मक और बौद्धिक भेदों और उनकी शारीरिक क्षमताओं में पाए जाने वाले भेदों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। हमारी सांस्कृतिक परम्परा में पुरुषों और महिलाओं को कार्य और भूमिकाएँ प्रदान की गई थीं, उन्हें भी उनकी शारीरिक क्षमताओं से घनिष्ठ रूप से जुड़ा माना जाता था।

समाज वैज्ञानिक जार्ज पीटर मुरडॉक पुरुष और स्त्री में विद्यमान जैविक भेदों को समाज में श्रम के लैंगिक विभाजन का आधार मानते हैं। परन्तु समाजशास्त्री एन ओकले ने इसका विरोध किया। उनका तर्क था कि श्रम का विभाजन सर्वव्यापी नहीं है। वह इस तर्क को सिर्फ कोरा मिथक मानती हैं कि महिलाओं में जैविकी की दृष्टि से भारी और कठोर काम करने की क्षमता नहीं होती। प्रशांत महासागरीय द्वीपों में बसी जनजातियों पर मार्गरेट मीड का अध्ययन इस बात की पुष्टि करता है। 1930 के उत्तरार्ध और 1960 के मध्य में, जो अंत:सांस्कृतिक आँकड़े प्राप्त हुए, वह परम्परागत समाज की उस कठोर अवधारणा पर चोट करते हैं कि पुरुष महिलाओं को सौंपे जाने वाले कार्यों को करने में अक्षम हैं तथा स्त्रियाँ पुरुषों के कार्यों को नहीं कर सकतीं। कुछ समाजों में आज भी बुनाई, कताई और खाना बनाना जैसे घरेलू कार्य पुरुषों द्वारा सम्पन्न किए

जाते हैं वहीं मोतियों के लिए गोताखोरी करना, डोंगी चलाना और घर बनाने जैसे साहसिक और कठोर कार्य स्त्रियों के कार्यक्षेत्र में आते हैं। आदिम समाज की यह व्यवस्था सरल समाजों में नहीं पायी गई और अगर अपवादस्वरूप ऐसा हुआ भी तो स्त्री को वह प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं हुई जो कि पुरुषों को प्राप्त होती रही है। फ्राइडल का कहना है कि पुरुषों को सौंपे जाने वाले कार्यों को स्त्रियाँ पूरा करती हैं तो उन्हें वही प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होती। इसका मुख्य कारण पुरुषों का वर्चस्व है। समाज में पुरुषों का वर्चस्व इसलिए बनता है कि पुरुषों का जीवन अधिक सार्वजनिक होता है और स्त्रियों का जीवन संतानोत्पत्ति और शिशुओं के लालन-पालन के कारण अधिक निजी बन जाता है।

विचारणीय तथ्य यह है कि क्या यह सोच उचित है कि जैविक विविधता या शारीरिक स्पष्ट अन्तरों के कारण लैंगिक असमानता प्रकृति की ही देन है। दरअसल पुरुषों और स्त्रियों के मध्य व्याप्त असमानताएँ प्राकृतिक नहीं बल्कि सामाजिक हैं क्योंकि ऐसा कोई जैविक कारक प्रतिलक्षित नहीं होता जिससे यह स्वीकार किया जाए कि सार्वजनिक शक्ति सम्पन्न पदों पर स्त्रियों की उपस्थिति कम होना प्राकृतिक है। स्त्रियों को पारिवारिक सम्पत्ति का 'छोटा सा ही हिस्सा' या यह कहना उचित होगा कि 'बिल्कुल नहीं' क्यों नहीं मिलता। हैरान करने वाला तथ्य यह है कि इस प्रश्न का कोई भी उत्तर प्रकृति से नहीं मिलता फिर भी यह यथावत अपना स्वरूप कायम किए हुए है। यद्यपि जिन समाजों में अपवादस्वरूप ऐसा होता है, उनकी ओर से इस असमानता के विरोध में एक प्रबलतम तर्क दिया जाता है, जो कि अकाट्य है कि यदि स्त्रियाँ परिवारों की मुखिया बनने और पारिवारिक सम्पत्ति को उत्तराधिकार में पाने के लिए जैविक रूप से अयोग्य थीं तो फिर मातृवंशीय समाज (यथा मेघालय का खासी समाज तथा केरल का नायर समाज जो आज भी मातृवंशीय है) वर्षों से सफलतापूर्वक क्यों चलते रहे। अनेक अफ्रीका समाजों में स्त्रियाँ किसानों तथा व्यापारियों के रूप में अपना काम निपुणता से कैसे करती रही हैं? स्पष्ट है कि पुरुषों और स्त्रियों के मध्य असमानता का कोई जैविक कारण नहीं है।

**स्त्री समानता का संघर्ष और कुछ अनसुलझे प्रश्न : एक वैश्विक दृष्टिकोण**–सन् 2015 में विश्व में प्रथम रैंकिंग प्राप्त टेनिस खिलाड़ी जोकोविच ने कहा था कि पुरुष खिलाड़ियों के मैचों को दुनिया भर में महिलाओं के मैचों से ज्यादा देखा जाता है, इसलिए पुरुष खिलाड़ियों की कमाई ज्यादा होनी चाहिए। कुछ ऐसा ही वक्तव्य इंडियन विमेन टेनिस टूर्नामेंट के मुख्य अधिकारी रेमंड मूर ने भी दिया था। उन्होंने कहा था कि डब्ल्यूटीए टूर पुरुष खिलाड़ियों की बदौलत ही चल रहा है। ये दोनों ही कथन स्त्री के प्रति मानसिकता को स्पष्ट करते हैं। पुरुषवादी इस सोच से लड़ने और स्वयं को सिद्ध करने का संघर्ष दो शताब्दी पूर्व ही शुरू हो गया था। 1972 में मेरी बोल्स्टन क्राफ्ट की पुस्तक 'ए विन्डिक्शन ऑफ द राइट्स ऑफ विमेन' में पहली बार मेरी ने 'स्वतंत्रता-समानता-भ्रातृत्व' के सिद्धान्त को स्त्री समुदाय पर लागू करने की माँग की। उन्होंने कहा कि कोई भी समतावादी सामाजिक दर्शन तब तक वास्तविक अर्थों में समतावादी नहीं हो सकता जब तक कि वह स्त्रियों को समान अधिकार और अवसर देने की बात नहीं करता। तब से लेकर अब तक एक लम्बी फेहरिस्त है उन लोगों की जिन्होंने स्त्री समानता के प्रश्न को अलग-अलग तरह से उठाया परन्तु सभी की बातों का केन्द्र बिन्दु 'निर्णय लेने की क्षमता' है। यह क्षमता तभी उत्पन्न हो सकती है जब स्त्री को आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्र में बराबरी का दर्जा मिले। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि समानता का संघर्ष सिर्फ भारतीय महिलाओं का है। सत्य तो यह है कि विकसित देशों में भी कमोबेश यह स्थिति बनी हुई है। असमान वेतन, पदोन्नति में भेदभाव, घरेलू हिंसा, मातृत्व अवकाश को अनचाहा बोझ मानने की प्रवृत्ति स्त्री समानता के प्रश्न को कठघरे में ला खड़ी करती है। ब्रिटेन के बराबरी और मानवाधिकार आयोग (ईएचओसी) ने डिपार्टमेंट ऑफ बिजनेस, एनीवेशन एंड स्किल्स के साथ मिलकर किये गये एक शोध, जो कि वर्ष 2015 के अन्त में किया गया था, बताया कि ब्रिटेन में काम की जगह (दफ्तर) पर हर पाँचवीं गर्भवती महिला प्रताड़ना की शिकार होती है। जबकि तीन-चौथाई गर्भवती महिलाओं के ऑफिस में कामके द ौरानभ ेदभावि कयाज ाताह ै ।न ौकरीके इ ंटरव्यूके द ौरान असफल रही तीन-चौथाई माताओं ने माना कि उनकी गर्भावस्था का पता चलने से उनकी नौकरी मिलने के अवसर कम हुए। यह शोध स्पष्टः उस मानसिकता को प्रकट कर रहा है जहाँ स्त्री को कार्य करने की मशीन समझा जाता है। अगर हम यह सोच रहे हैं कि यह स्थिति ब्रिटेन की ही है तो हम गलत हैं। विश्व मानचित्र में सबसे शक्तिशाली देश अमेरिका में भी महिलाएँ सामाजिक असमानता का दंश झेल रही हैं। अर्थशास्त्री सिलिव्या एन हालिट ने अपनी पुस्तक 'क्रिएटिंग ए लाइफ : प्रोफेशनल वुमन एण्ड ए क्वेट फॉर चिल्ड्रन' में अमेरिका में कामकाजी महिलाओं के सामने 'क्रूर दुविधा' की परतें खोली थीं। मिसाल के तौर पर 40 की उम्र के पड़ाव तक पहुँची पेशेवर अमेरिकी महिलाओं में से 42 प्रतिशत संतानहीन थीं, जिसमें अधिकांश ने यह फैसला स्वयं लिया क्योंकि वह जानती थीं कि मातृत्व अवकाश की अवधि और उसके पश्चात् निजी संस्थाओं द्वारा उन्हें येन केन प्रकारेणस ंस्थाओंस ेक ामछ ोड़नेके ि लएि ववशि कयाज ाएगा ।ग ैर लाभकारी संगठन कम्युनिटी बिजनेस के लैंगिक विविधता पैमाने पर किये गये अध्ययन के निष्कर्ष कहते हैं कि एशिया में भी ऐसी स्थिति बन रही है।

**स्त्री समानता का संघर्ष और भारतीय दृष्टिकोण**–भारत में महिलाओं का समानता का संघर्ष कब से आरम्भ हुआ यह जानने से पूर्व हमारे लिए यह जानना जरूरी है कि क्या भारत में हमेशा से ही स्त्री को असमानता की स्थिति प्राप्त थी। वैदिककालीन वृत्तांत हमें बताते हैं कि स्त्री-पुरुष गुरुकुल में साथ-साथ शिक्षा अर्जित करते थे। कई विदुषियों ने तो वेदों का विशारद ज्ञान प्राप्त किया। अपना जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता महिलाओं को प्राप्त थी। सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में भी स्त्री-पुरुषों की समान भागीदारिता थी। महिलाएँ सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में गमन करती थीं। परन्तु मध्यकाल के आते-आते महिलाओं को दोयम दर्जे पर

धकेल दिया गया।

आधुनिक भारत में स्त्रियों की स्थिति का प्रश्न उन्नीसवीं सदी के मध्यवर्गीय सामाजिक सुधार आंदोलनों के हिस्से के रूप में उदित हुआ। कई सुधारकों ने स्त्रियों के अधिकारों के लिए संघर्ष करने का अथक प्रयास किया। बंगाल में राजा राममोहन राय ने सती-विरोधी अभियान का नेतृत्व किया, बॉम्बे प्रेसिडेंसी में वहाँ के अग्रणी समाज सुधारक रानाडे ने विधवाओंके प ुनर्विवाहके ि लएअ ांदोलनच लाया,ज़ योतिबाफ ु लेन े लैंगिकअ त्याचारोंके ि वरुद्धअ ावाजउ ठाई ।स माजम ें म हिलाओंके उत्थान के लिए, महिलाओं ने भी अतुलनीय प्रयास किये। 1882 में 'स्त्री पुरुष तुलना' नामक एक महाराष्ट्रीय गृहिणी ताराबाई शिंदे द्वारा लिखी गई पुस्तक में, पुरुष प्रधान समाज द्वारा अपनाए गए दोहरे मापदण्डों का विरोध किया गया था। उल्लेखनीय है कि 1905 में बेगम रोकेया द्वारा 'सुल्तानाज ड्रीम' नामक पुस्तक लिखी गई। 'सुल्तानाज ड्रीम' शीर्षक नामक यह अद्‌भुत कहानी सम्भवत: भारत में विज्ञान तथा लेखन का प्रारम्भिक नमूना है और विश्वभर में कहीं भी किसी महिला लेखिका द्वारा रचित प्रथम कृति का उदाहरण है। प्रारम्भिक नारी-अधिकारीवादी दृष्टिकोण के साथ-साथ हमारे यहाँ अनेकानेक महिला संगठन भी थे जो बीसवीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में अखिल भारतीय एवं स्थानीय स्तरों पर उभर आए थे। स्वतंत्र भारत में महिलाओं की समानता को केन्द्र में रखकर अनेक कानून बने।

**महिलाओं के उत्थान के प्रयास–**

**1. औपचारिक समानता की संवैधानिक गारंटी–**

**( अ )** भारतीय संविधान **सामाजिक-लिंग समानता** का वादा करता है। संविधान का अनुच्छेद 14 कानून की दृष्टि से सभी को समानता प्रदान करता है, तो अनुच्छेद 15 किसी भी तरह के भेदभाव को वर्जित करता है। हिन्दू कानून महिलाओं को सम्बन्ध-विच्छेद और पुनर्विवाह का अधिकारद ेताह ै ।इ सीप ्कारउ त्तराधिकारअ धिनियमम हिलाओंक ो अपने पिता की सम्पत्ति में बराबरी का भाग या हिस्सा देता है।

**( ब ) राज्य द्वारा प्रायोजित समाज कल्याण–** भारत सरकार ने 1953 में महिला कल्याण और वंचित समूहों के विकास के लिए केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की। इस बोर्ड ने अनेक महिला संगठनों के विकास को बढ़ावा दिया, जिससे सामाजिक और राजनैतिक महिला कार्यकर्ताओं का उदय हुआ।

**2. महिला कल्याण नीतियाँ–** अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की दशा को लेकर बढ़ती चिन्ता और जागरूकता को दृष्टि में रखकर भारत सरकार ने महिला कल्याण के लिए प्रभावशाली नीतियाँ अपनाईं और विषयक अध्ययनों को प्रोत्साहन दिया। इस दिशा में उसका सबसे बड़ा उल्लेखनीय कदम 1971 में महिलाओं की स्थिति पर समिति का गठन था। 'टुवर्ड्स इक्वलिटी' शीर्षक से 1974 में प्रकाशित इस समिति की रिपोर्ट में कहा गया था कि संस्थागत तौर पर सबसे बड़ी अल्पसंख्यक होने के बावजूद राजनीति पर महिलाओं का असर नाममात्र है। गौरतलब है कि महिला समानता की अवधारणा का उद्‌भव ही इस विचारधारा से होता है कि 'यह महिलाओं को शक्ति, क्षमता तथा काबिलियत देता है ताकि वह अपने जीवन स्तर को सुधारकर अपने जीवन की दिशा को स्वयं निर्धारित कर सके।' अर्थात् यह वह प्रक्रिया है जो महिलाओं को सत्ता की कार्यशैली समझने की न केवल समझ दे अपितु साथ ही साथ सत्ता के स्रोतों पर नियंत्रण कर सकने की क्षमता प्रदान करे। इसलिए समिति ने सुझाव दिया था कि इसका उपाय यही है कि हर राजनैतिक दल महिला उम्मीदवारों का एक कोटा निर्धारित करे और जब तक ऐसा हो, तब तक उपाय के तौर पर समिति ने नगरपरिषदों और पंचायतों में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित करने के लिए संविधान में संशोधन करने की सिफारिश की। सन् 1993 में 73वें और 74वें संविधान संशोधनों के माध्यम से ऐसा किया भी गया। पंचायतीराज संस्थानों में महिलाओं के लिए3 3प ्रतिशतअ ारक्षणक ाप ्रावधानम हिलास मानतात था ि नर्णय प्रक्रिया में उनकी सहभागिता में वृद्धि की दिशा में एक क्रान्तिकारी कदम था। शनै: शनै: महिलाओं के स्थान को विकास की प्रक्रिया के सन्दर्भ में देखाज ानेल गा ।क ल्याणन ीतियोंके ल क्ष्यके रू पम ें द ेखेज ानेके वनिस्पत महिलाओं को विकास का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग माना जा रहा है। महिलाओं की इस पुनर्व्याख्या को छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में अभिव्यक्ति मिली। भारत के इतिहास में प्रथम बार इसमें महिला और विकास पर एक अलग अध्याय रखा गया था। महिलाओं को समाज के हाशिए से मुख्यधारा में लाने के लिए उनके विकास की दिशा में छठी पंचवर्षीय योजना ने तीन रणनीतियाँ अनिवार्य बताईं-(1) आर्थिक स्वतंत्रता (2) शैक्षिक विकास और (3) स्वास्थ्य सुरक्षा।

**महिला समानता का प्रश्न और वर्तमान स्थिति–** ''नए जजों का शपथ ग्रहण समारोह था। मैं कोर्ट में ही बैठी थी चीफ जस्टिस के साथ। ताकि उनके अनुभवों का लाभ मिल सके। वे भी रूढ़िवादी थे। उन्हें महिला के साथ बैठना असहज लग रहा था। इसका मतलब सिर्फ खुली अदालत में ही नहीं चेम्बर्स में भी बातचीत या फैसलों के लिए।'' देश की पहली हाईकोर्ट महिला चीफ जिस्टस लीला सेठ का यह वक्तव्य यद्यपि 1978 में घटे एक वाकये का है, परन्तु क्या तब से लेकर आज तक यह तस्वीर बदली है? यकीनन इस प्रश्न पर, स्मृति में कौंधती हुई फोर्ब्स पत्रिका की टॉप (प्रभावशाली) सूची में चंद भारतीय महिलाओं के चमकते चेहरे, स्वीकृति में उत्तर देने की ओर इशारा करेंगे परन्तु क्या अंगुलियों पर गिनी जाने वाली महिलाओं की सफलता देश की आधी आबादी की वास्तविक तस्वीर को उभार पाएगी? सत्य तो यह है कि पुरुष प्रधान पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियों को उनकी पारम्परिक भूमिकाओं में ही देखा जाता है जो पुरुषों के नियंत्रण में, उनके अधीन रहती है। अगर कोई स्त्री चाहे कि उसे एक स्त्री के रूप में स्वीकार किया जाए तो उसे अतिमहत्त्वाकांक्षी एवं अतिप्रवीण होने के उलाहने दिए जाते हैं।

भारत की आर्थिक नीतियों ने दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-07) में जो तीन महत्त्वपूर्ण रणनीतियाँ सम्मिलित की, वह हैं–महिलाओं के लिए सकारात्मक रूप से आर्थिक एवं सामाजिक नीतियों के निर्माण

का वातावरण तैयार करने के लिए सामाजिक सशक्तीकरण, आर्थिक सशक्तीकरण एवं लैंगिक न्याय प्रदान करना तथा उनके विरुद्ध हर प्रकार के भेदभाव को समाप्त करना ताकि लैंगिक समानता के लक्ष्यों को बढ़ावा दिया जा सके।

आर्थिक सशक्तीकरण को महिला समानता के एक आधार बिन्दु के रूप में देखा जाता रहा है। संरचनात्मक समायोजन के प्रतिक्रियास्वरूप बीते दशकों में महिलाएँ स्वयं अपनी आर्थिक क्रियाओं को बढ़ावा देने का प्रयास कर रही हैं। सामाजिक उत्तरदायित्व, घरेलू रखरखाव तथा आय उत्पादक कार्यों में महिलाओं की भागीदारी बढ़ी है परन्तु इसके चलते उन पर गहरा दबाव भी बढ़ा है। 'असमान वेतन' महिला समानता पर एक बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न है। आर्थिक हिस्सेदारी और महिलाओं के लिए अवसरों के मामले में अभी भी 60 प्रतिशत लैंगिक गैरबराबरी है और अगर इसी गति से लैंगिक गैरबराबरी कम हुई (2015 के वर्तमान आँकड़े वर्ष 2006के आँकड़े से 4 प्रतिशत ही कम है) तो इसे खत्म करने में दुनिया को 81 साल लगेंगे यानि 2095 तक ही कार्यस्थलों में लैंगिक भेद खत्म हो पाएगा।

आश्चर्यजनक तथ्य तो यह है कि आर्थिक दृष्टिकोण से पिछड़े हुए कई देशों की स्थिति, लैंगिक समानता के सन्दर्भ में भारत से कहीं बहुत अच्छी है। जैसे अफ्रीका में खांडा का स्थान लैंगिक समानता में सातवाँ है क्योंकि यहाँ लगभग उतनी ही महिलाएँ नौकरी करती हैं, जितने पुरुष। इसी कारण यह पूरे अफ्रीका में सबसे कम लैंगिक असमानता वाला देश है। एशियाम ेंल ैंगिकस मानताके द ृष्टिकोणस ेस बसेऊ परन ावीं र ैंकिंग फिलीपींस की है। इसका सबसे मुख्य कारण है, पुरुषों और महिलाओं के बीच एक ही काम के लिए समान वेतनमान का होना। लैंगिक समानता के सन्दर्भ में भारत का प्रदर्शन बेहद खराब है। विश्व आर्थिक फोरम में लैंगिक समानता के इस अध्ययन की 2015 की रिपोर्ट बताती है कि 142 देशों की सूची में भारत 114वें स्थान पर है।

राजनैतिक सत्ता, स्त्री समानता का एक और अन्य महत्त्वपूर्ण आधारबिन्दु है। इस सन्दर्भ में भी अगर हम भारतीय महिलाओं की बात करते हैं तो उनके लिए संघर्ष की एक लम्बी यात्रा दिखाई देती है। इंटर पार्लियामेंटरी यूनियन (आई.पी.यू.) की रिपोर्ट बताती है कि भारत की संसद या विधानसभा में महिला जनप्रतिनिधियों की काफी कम उपस्थिति महिलाओंके प ्रतिभ ेदभावपूर्णर ाजनीतिकम ानसिकताक ाप ्रतीकह ै। आई.पी.यू. की रिपोर्ट 2015 के मुताबिक, इस मोर्चे पर भारत को 105वां स्थान प्राप्त है। इस सूची में पहले दस नम्बर पर खांडा, बोलिविया, अंडोरा, क्यूबा, इक्वेडोर व दक्षिण अफ्रीका जैसे देश हैं, जो स्पष्ट करते हैं कि महिला समानता और राजनैतिक प्रतिनिधित्व के माध्यम से महिलाओं के नेतृत्व को स्वीकार करने के लिए आर्थिक सबलता से कहीं अधिक वृहद् दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

**महिला समानता और विश्व की भूमिका–** यह सत्य है कि तब तक कोई वास्तविक सामाजिक परिवर्तन सम्भव नहीं है, जब तक प्रत्येक समाज पुरुषों और स्त्रियों के बीच समानता, समान उत्तरदायित्व और पारस्परिक सम्मान की भावना पर आधारित सम्बन्धों के आधार पर नये मूल्यों को अपना नहीं लेता।

विश्व के अधिकांश देशों ने 1979 के महिलाओं के विरुद्ध हर प्रकार के भेदभाव की समाप्ति से सम्बन्धित समझौते को औपचारिक रूप से अपना तो लिया है परन्तु वास्तविकता में, उसके क्रियान्वयन में अपने लक्ष्य से कोसों दूर है।

महिलास ंगठनोंए वंम ैक्सिकोश हर,क ोपेनहेगन,न ैरोबीत था बीजिंग में हुए अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलनों ने अपने विकास एजेंडा में दृढ़ता से लैंगिक समानता के मुद्दों को उठाया। 1946में संयुक्त राष्ट्र ने महिलाओं की स्थिति पर एक आयोग गठित किया। इस आयोग के दो प्रमुख कार्य थे–राजनीतिक, आर्थिक, नागरिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में महिलाओं के अधिकारों को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सुझाव प्रस्तुत करना एवं आर्थिक व सामाजिक परिषद् के कार्यों की रिपोर्ट तैयार करना। इसका दूसरा कार्य था महिला अधिकारों के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण समस्याओं के बारे में सुझावों का प्रस्ताव तैयार करना।

संयुक्त राष्ट्र ने अपने 2015 के बाद के विकास एजेंडे के पूर्ण कार्यान्वयनक ोस ुनिश्चितक रनेक े लिएद ुनियाभ रम ेंए कव ्यापक अभियानश ुरू कयाह ै इ सअ भियानक ा उ द्देश्यह ै–दुनियाअ पने विकास लक्ष्यों को तब तक 100 प्रतिशत हासिल नहीं कर सकती है जब तक कि इसके 50 प्रतिशत लोगों–अर्थात् महिलाओं–के साथ "सभी क्षेत्रों में पूर्ण और समान प्रतिभागियों के रूप में व्यवहार नहीं किया जाता है।" संयुक्त राष्ट्र का मानना है कि सतत विकास के लिए लैंगिक समानता और महिला सशक्तीकरण अपरिहार्य है तथा लैंगिक असमानता सभी असमानताओं की जननी है जिसमें देशों के बीच और देशों के भीतर मौजूद असमानताएँ शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र का यह भी विश्वास है, "लैंगिक समानता को तेजी से एक सफल मिशन के रूप में देखा जा रहा है–सतत विकास का समर्पित, व्यापक और परिवर्तनकारी लक्ष्य न केवल लैंगिक समानता को प्राप्त करने के बारे में है बल्कि समस्त महिलाओं और लड़कियों को सशक्त करने के बारे में है, इसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि कोई भी पीछे न छूटे।"

संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्य की पूर्ति किस युग में और किस व्यापकता के साथ होगी, इसका उत्तर तो भविष्य के गर्भ में छुपा हुआ है। परन्तु आज यह स्पष्ट है कि विश्व के अनेक भागों में लैंगिक समानता की दिशा में जो भी प्रगति हुई है, वह उस सीमा से बहुत कम है, जितनी कि अपेक्षित थी।

## धार्मिक अल्पसंख्यकों का संरक्षण

भारतीय राष्ट्रवाद समावेशात्मक एवं लोकतंत्रात्मक भावनाओं का संरक्षक है। यह समावेशात्मक इसलिए यह है कि इसमें विविधता और बहुलता को मान्यता दी जाती रही है और लोकतंत्रात्मक इसलिए क्योंकि यह भेदभाव और अपवर्जन के किसी भी रूप को स्वीकार नहीं करता अपितु एक न्यायपूर्ण एवं सामयिक समाज की स्थापना में विश्वास

रखता है।

अल्पसंख्यक समूहों की धारणा का समाजशास्त्र में व्यापक अर्थ में प्रयोग हुआ है, परन्तु इसकी परिधि मात्र एक संख्यात्मक विशिष्टता तक निश्चित नहीं की गई है, इसकी व्यापकता में असुविधा या हानि के भाव भी सम्मिलित है। अल्पसंख्यक शब्द का समाजशास्त्रीय भाव है। अल्पसंख्यक वर्ग के सदस्यों का एक सामूहिकता के मध्य निर्मित होना, अर्थात् उनमें अपने समूह के प्रति एकात्मकता, एकजुटता और उससे सम्बन्धित होने का प्रबल भाव होता है।

**अल्पसंख्यकक ीअ वधारणा–**संयुक्त राष्ट्र के एक विशेष प्रतिवेदक फ्रेंसिस्को कॉपोटोर्टी ने एक वैश्विक परिभाषा दी जिसके अनुसार ''किसी राष्ट्र-राज्य में रहने वाले समुदाय जो संख्या में कम हों और सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक रूप से कमजोर हों एवं जिनकी प्रजाति, धर्म, भाषा आदि बहुसंख्यकों से अलग होते हुए भी राष्ट्र के निर्माण, विकास, एकता, संस्कृति, परम्परा और राष्ट्रीय भाषा को बनाये रखने में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देते हों, तो ऐसे समुदायों को उस राष्ट्र-राज्य में अल्पसंख्यक माना जाना चाहिए।''

अल्प + संख्यक दो शब्दों से मिलकर 'अल्पसंख्यक' बना है। अल्प का अर्थ कम व संख्यक से आशय संख्या से है। अर्थात् जिसकी संख्या कम हो तो अल्पसंख्यक परन्तु जनसंख्या अनुपात कितना कम हो इसकी कोई परिभाषा नहीं है। अन्तर्राष्ट्रीय नियमों, परम्पराओं, मान्यताओं के अनुसार किसी धार्मिक समूह को अल्पसंख्यक घोषित करते समय निम्न मापदण्ड होने चाहिए–''अल्पसंख्यक धर्म के अनुयायी की जनसंख्या अनुपात कुल जनसंख्या का 8 प्रतिशत से कम होना चाहिए अर्थात् 8 प्रतिशत या उससे अधिक की जनसंख्या अनुपात वाले धार्मिक समूह को अल्पसंख्यक श्रेणी में नहीं रखा जा सकता।'' परन्तु यह मापदण्ड अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुसार है।

भारतीय संविधान ने 'अल्पसंख्यक' शब्द का विवरण धारा 29 से लेकर 30 तक और 350 ए से लेकर 350 बी तक में उल्लेखित है। इसकी परिभाषा कहीं भी नहीं दी गई है। भारतीय संविधान की धारा 29 में अल्पसंख्यक शब्द को इसके सीमांतर शीर्षक में शामिल तो किया गया, किन्तु इसमें बताया गया कि यह नागरिकों का वह हिस्सा है जिसकी भाषा, लिपि अथवा संस्कृति भिन्न है। यह एक पूरा समुदाय हो सकता है जिसे सामान्य रूप से एक अल्पसंख्यक अथवा एक बहुसंख्यक समुदाय के एक समूह के रूप में देखा जाता है।

भारतीय संविधान की धारा 30 में विशेष तौर पर अल्पसंख्यकों की दो श्रेणियों धार्मिक और भाषायी का उल्लेख किया गया है। शेष दो धाराएं 350 ए और 350 बी केवल भाषायी अल्पसंख्यकों से ही सम्बन्धित है।

भारत सरकार के समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा 23 अक्टूबर 1993 को अधिसूचना जारी कर अल्पसंख्यक समुदायों के तौर पर पांच धार्मिक समुदाय यथा मुस्लिम, ईसाई, सिक्ख, बौद्ध तथा पारसी समुदायों को अधिसूचित किया गया था। 27 जनवरी 2014 को केन्द्र सरकार के राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग कानून 1992 की धारा 2 के अनुच्छेद (ग) के अन्तर्गत प्राप्त अधिकारों का उपयोग करते हुए जैन समुदाय को भी अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में अधिसूचित कर दिया है।

2011 की जनगणना के अनुसार मुस्लिम धार्मिक अल्पसंख्यकों की संख्या 17.22 करोड़ (14.2 प्रतिशत), ईसाइयों की संख्या 2.78 करोड़ (2.3 प्रतिशत), सिख और बौद्ध धार्मिक अल्पसंख्यकों की संख्या 2.08 (1.7 प्रतिशत), 84 लाख (0.7 प्रतिशत) क्रमशः है। जैन धार्मिक अल्पसंख्यकों की कुल जनसंख्या 45 लाख (0.4 प्रतिशत) तथा अन्य 78 लाख (0.7 प्रतिशत) है।

## धार्मिक अल्पसंख्यकों का संरक्षण

धार्मिक अल्पसंख्यकों के संरक्षण के लिए संविधान में भिन्न-भिन्न अनुच्छेदों में प्रावधान किए गए हैं। इन प्रावधानों के पीछे उद्देश्य भारतीय लोकतंत्रात्मक भाव का संरक्षण एवं संवर्द्धन है। लोकतंत्र मूल भाव, किसी प्रकार के विभेद का विरोध करता है।

**1. अल्पसंख्यकों के लिए उपबंध–**भारतीय संविधान के भाग 111 के अनुच्छेद 29 और अनुच्छेद 30 में अल्पसंख्यक वर्गों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। संविधान में अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के लिए जो उपबंध किए गए हैं वे निम्नांकित हैं-

**(क) धार्मिक स्वतंत्रता–**भारतीय संविधान सभी अल्पसंख्यकों को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान करता है। संविधान में किसी भी धर्म को अग्रसर करने के लिये कोई उपबंध नहीं है।

**(ख) भाषा और संस्कृति का अधिकार–**राज्य के प्रत्येक नागरिक या उसके किसी भाग के निवासी, नागरिकों के किसी अनुभाग को जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपियाँ, संस्कृति हैं, उसे बनाए रखने का अधिकार है। अनुच्छेद 29 (1) का यह प्रावधान, जनप्रतिनिधित्व कानून 1951 के तहत है।

**(ग) इच्छानुसार शिक्षा संस्थानों की स्थापना–**अनुच्छेद-30 के अनुसार सभी अल्पसंख्यकों को अपनी इच्छानुसार शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करने का अधिकार है। प्रत्येक अल्पसंख्यक समुदाय को न केवल अपनी शिक्षा संस्थाएँ स्थापित करने का अधिकार है, बल्कि अपने समुदाय के बच्चों को अपनी भाषा में शिक्षा देने का अधिकार है।

**(घ) शिक्षा संस्थाओं के संबंध में राज्य द्वारा विभेद नहीं–**शिक्षण संस्थाओं को किसी प्रकार की सहायता देने में राज्य इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रबन्ध में है।

**2. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग–**देश के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में अल्पसंख्यक समुदाय की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सरकार ने इन समुदायों के सामाजिक आर्थिक उत्थान के लिये समय-समय पर विभिन्न कार्यक्रम एवं योजनाएँ संचालित की हैं। भारत सरकार

ने अल्पसंख्यक समुदायों के सशक्तीकरण और उनकी संस्कृति, भाषा एवं धार्मिक स्वरूप को बनाए रखने के लिये राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम, 1992 अधिनियमित किया। इस अधिनियम के अंतर्गत अल्पसंख्यक वर्ग उस समुदाय को माना गया, जिसे केन्द्र सरकार अधिसूचित करे। अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम (1982) के सफल कार्यान्वयन हेतु सरकार ने मई 1993 में एक अल्पसंख्यक आयोग का गठन किया।

इस आयोग के मुख्य कार्य निम्नलिखित हैं–

क. संघ और राज्यों के अधीन अल्पसंख्यकों की उन्नति के लिये किए गए विकास कार्यों का मूल्यांकन करना।

ख. अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा बनाए गए रक्षा उपायों के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करना।

ग. अल्पसंख्यकों के विरुद्ध भेदभाव की समस्या का अध्ययन करना तथा उसको दूर करने के उपायों को ढूँढना।

घ. अल्पसंख्यकों के सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक विकास के मुद्दे का अध्ययन करना तथा विश्लेषण करना।

च. अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित कोई भी निर्देश जो केन्द्रीय सरकार द्वारा दिया गया हो, उस पर कार्यवाही करना।

छ. अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित किसी भी समस्या के लिए समय-समय पर अथवा विशेष प्रतिवेदन तैयार करके केन्द्रीय सरकार के समक्ष प्रस्तुत करना।

ज. अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा के प्रभावकारी कार्यान्वयन के लिये केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों को सुझाव देना।

**3. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग 1997–**

(क) अल्पसंख्यकों के सुरक्षा उपायों का मूल्यांकन तथा अनुश्रवण करना।

(ख) सरकार के अन्य विभागों को सुझाव देना।

(ग) अल्पसंख्यकों के अधिकारों या सुरक्षा उपायों से उन्हें वंचित करने की शिकायतों पर गंभीरता से विचार करना।

(घ) आयोग को दिए गए विषयों पर विचार करना।

**4. अल्पसंख्यक कल्याण के प्रधानमंत्री 15 सूत्रीय कार्यक्रम–** अल्पसंख्यक समुदायों को शिक्षा, रोजगार, आर्थिक गतिविधियों में बराबर की हिस्सेदारी तथा उनका उत्थान सुनिश्चित करने के लिये जून 2006 में अल्पसंख्यकों के कल्याण के लिए प्रधानमंत्री के नये 15 सूत्री कार्यक्रम की घोषणा की गयी थी।

इस कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य निम्नांकित हैं–

क. शिक्षा के क्षेत्र में अवसरों को बढ़ावा देना।

ख. मौजूदा एवं नयी योजनाओं के जरिए आर्थिक गतिविधियों एवं रोजगार में अल्पसंख्यकों की समान हिस्सेदारी सुनिश्चित करना, स्वरोजगार के लिए ऋण सहायता को बढ़ावा देना।

ग. बुनियादी सुविधाओं के विकास से जुड़ी योजनाओं में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करते हुए उनके जीवन स्तर में सुधार लाना।

घ. सांप्रदायिक हिंसा एवं वैमनस्यता की रोकथाम तथा नियंत्रण।

**5. सच्चर समिति–** 9 मार्च 2005 को दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश राजेन्द्र सच्चर की अध्यक्षता में सात सदस्यीय समिति का गठन किया गया। इस समिति को मुस्लिम अल्पसंख्यकों के आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर के अध्ययन का कार्य सौंपा गया। समिति ने अपनी रिपोर्ट 8 जून 2006 को सरकार को सौंपी। इसकी मुख्य सिफारिशें निम्नांकित हैं–

- मुस्लिमों में रोजगार दर बढ़ाने के लिए आवश्यक उपाय किए जायें।
- वंचित अल्पसंख्यक समुदाय के हितों के सुविचारित प्रतिनिधित्व के लिए एक समान अवसर आयोग का गठन किया जाये।
- विभिन्न सामाजिक-धार्मिक वर्गों हेतु एक राष्ट्रीय डाटा बैंक का सृजन किया जाये।
- मदरसों को सीनियर सैकण्डरी विद्यालयों से जोड़ा जाए एवं इनके द्वारा निर्गमित उपाधियों की रक्षा एवं अन्य परीक्षाओं की अर्हता हेतु मान्य किया जाये।
- धार्मिक सहिष्णुता को प्रोत्साहित करने हेतु पाठ्यपुस्तकों में उचित सामाजिक मूल्यों को सुनिश्चित किया जाये।

केन्द्र सरकार ने सच्चर समिति की रिपोर्ट पर कार्रवाई करते हुए कुछ सीमित उपाय भी किए हैं–

- माध्यमिक स्तर तक गुणवत्तायुक्त शिक्षा की पहुँच, राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान।
- क्षेत्र विशेष एवं मदरसा आधुनिकीकरण कार्यक्रम को संशोधित किया गया है और इसे दो भागों में विभक्त किया गया है।
- देश के शैक्षिक रूप से पिछड़े 374 जिलों में प्रत्येक में एक मॉडल कॉलेज की स्थापना की जायेगी। इन 374 जिलों में से 61 जिलों की पहचान अल्पसंख्यक बहुल जिलों के रूप में की गई है।
- दो जिन क्षेत्रों में अल्पसंख्यक खासकर मुस्लिम अधिक रहते हैं, वहाँ के विश्वविद्यालयों एवं कॉलेजों में महिला छात्रावास की स्थापना व्यवस्था के विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से वरीयता का प्रावधान।

**6. अल्पसंख्यकों को शिक्षा–** राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में समानता और सामाजिक न्याय के हित में शैक्षणिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों को शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। 1992 में इसमें दो नई योजनायें जोड़ दी गयी।

(क) शैक्षिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों के लिए गहन क्षेत्रीय कार्यक्रम

(ख) मदरसा शिक्षा आधुनिकीकरण वित्तीय सहायता योजना 1993-94 के मध्य आरम्भ की गयी।

(ग) राष्ट्रीय अल्पसंख्यक शैक्षिक संस्था आयोग का गठन 2004 में

किया गया। जिसके अन्तर्गत अल्पसंख्यक संस्थाएं अनुसूचित विद्यालय से स्वयं को सम्बद्ध कर सकती है।

**7. मदरसा शिक्षा के आधुनिकीकरण के लिए वित्तीय सहायता योजना–**

(क) यह योजना पूरी तरह स्वैच्छिक है। इसकी वित्तीय सहायता केन्द्र द्वारा प्राप्त है।

(ख) इस योजना को ग्रहण करना मदरसों की इच्छा पर निर्भर करता है।

(ग) इस योजना का मूल उद्देश्य प्राचीन संस्थानों, जैसे मकतबा, मदरसों में आधुनिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिये वित्तीय सहायता देना है।

**8. अल्पसंख्यकों की शिक्षा सम्बन्धी योजनाएँ–**

(क) शैक्षिक रूप से पिछड़े अल्पसंख्यकों के लिये 'क्षेत्र गहन कार्यक्रम' (एरिया इंटेनसिव प्रोग्राम)

(ख) इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य उन हिस्सों में जहाँ शिक्षा में पिछड़े हुए अल्पसंख्यक बहुल संख्या में रहते हैं वहाँ शिक्षा के लिये सुविधा एवं संसाधन उपलब्ध कराना।

(ग) मदरसा शिक्षा को आधुनिक बनाने के लिए वित्तीय सहायता।

(घ) अल्पसंख्यकों को प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये तैयार करने के लिए कोचिंगक क्षाओंके ि लयेि वश्वविद्यालयअ नुदानअ ायोगक ी वित्तीय सहायता।

(च) फारसी और अरबी भाषा के क्षेत्र में काम करने वाली संस्थाओं को वित्तीय सहायता।

अल्पसंख्यकों के जीवन के संरक्षण एवं उन्नयन के लिये केन्द्र सरकार ने 2008-09 में बहु आयामी विकास कार्यक्रम भी आरम्भ किये हैं। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य अल्पसंख्यक बहुल जिलों में लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाना, विभिन्न प्रकार के असंतुलनों को कम करना तथा सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार लाना है।

विकास के दृष्टिकोण से जो जिले मूलभूत सुविधाओं से वंचित हैं, उनके लिये योजनाओं पर बल दिया गया है, जिसमें पक्के घरों का निर्माण, स्वच्छ पेयजल एवं बिजली की उपलब्धता, स्कूली एवं माध्यमिक शिक्षा की बेहतर व्यवस्था तथा आय बढ़ाने वाली लाभार्थी योजनाएँ शामिल है।

इसके अलावा अल्पसंख्यक मंत्रालय अल्पसंख्यक समुदायों के विद्यार्थियों को आर्थिक एवं सामाजिक रूप से सशक्त बनाने की दिशा में अग्रसर है और अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए विभिन्न छात्रवृत्तियाँ उपलब्ध कराई जा रही हैं-जैसे प्री- मैट्रिक स्कॉलरशिप स्कीम, मैरिट-मींस स्कॉलरशिप स्कीम, मौलाना आजाद नेशनल फैलोशिप, अल्पसंख्यक वर्ग की महिलाओं के लिये नेतृत्व विकास योजना आदि।

इन योजनाओं की क्रियान्वित के लिये देश की सरकारी व्यवस्था कटिबद्ध है, क्योंकि विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्रात्मक देश ने अपना सर्वप्रथम दायित्व, सामाजिक समानता एवं समरसता को बनाये रखने का रखा है।

## नि:शक्तजनों (विशेष योग्यजनों) की देखभाल–

नि:शक्तजनों को 'अन्यथा सक्षम' या विशेष योग्यजन भी कहा जाता है। अन्यथा सक्षम लोग केवल इसलिए 'अक्षम' नहीं होते हैं कि वे शारीरिक या मानसिक रूप से 'बाधित' होते हैं, लेकिन इसलिए भी अक्षमह ोतेह ैंि कस माजक् छइ सर ीतिस ेब नाह ैि कव हउ नकी आवश्यकताओं को पूर्ण नहीं करता।

समस्त विश्व में नि:शक्तता या अक्षमता को जिस अर्थ में समझा जाता है, उसके निम्नांकित लक्षण हैं–

- अक्षमता/निर्योग्यता को एक जैविक कमजोरी माना जाता है।
- अक्षम व्यक्ति को हमेशा पीड़ित व्यक्ति के रूप में देखा जाता है।
- यह विश्वास किया जाता है कि निर्योग्यता उस निर्योग्य व्यक्ति के अपने प्रत्यक्ष ज्ञान से जुड़ी है।

अमूमन विश्व के सभी भागों में एक ऐसी संस्कृति व्याप्त है, जहाँ शारीरिक 'पूर्णता' को आदर की दृष्टि से देखा जाता है परन्तु 'पूर्ण शरीर' का अभाव असामान्य या हेय माना जाता है। ऐसी सोच का मूल कारण उस सांस्कृतिक संकल्पना में निहित है जो असमर्थ या दोषपूर्ण शरीर को दुर्भाग्य का परिणाम मानती है। बहुत दुखद पहलू यह है कि भारत में प्रचलित प्रमुख सांस्कृतिक विचारधारा एवं संरचना, विकलांगता को, पिछले जन्मों के कर्मों की परिणति मानती है। परन्तु 'अन्यथा अक्षम' शब्द इनमें से किसी भी अवधारणा को स्वीकार नहीं करता।

नि:शक्तजन/विकलांगजन (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 की धारा 2(न), (जिसे विकलांगजन अधिनियम, 1995 के रूप में भी जाना जाता है), नि:शक्तजन को ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित करता है जो किसी चिकित्सा प्राधिकारी द्वारा यथा प्रमाणित किसी विकलांगता से न्यूनतम 40 प्रतिशत पीड़ित है।

यह विकलांगता (क) दृष्टिबाधिता (ख) अल्पदृष्टि (ग) कुष्ठ रोग उपचारित (घ) श्रवण बाधिता (ङ) चलन विकलांगता (च) मानसिक रोग (छ) मानसिक मंदता (ज) स्वलीनता (ऑटिज्म) (झ) प्रमस्तिष्क अंगघात (सेरेब्रल पाल्सी) अथवा (ङ), (छ), (ज) में से दो या अधिक का संयोजन, हो सकता है।

वर्ष2 011क ीज नगणनाके अ नुसार,भ ारतमें2 .68क रोड़ विशेष योग्यजन हैं (जो कि कुल जनसंख्या का 2.21 प्रतिशत है)। कुल विशेष योग्यजनों में से 1.50 करोड़ पुरुष हैं और 1.18 करोड़ स्त्रियाँ हैं।

**विशेष योग्यजनों हेतु संवैधानिक प्रावधान–**

**1.** अनुच्छेद 41 के अनुसार, "राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और नि:शक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव के मामलों में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।" इसके अलावा, अनुच्छेद 243-छ की 11वीं अनुसूची और

अनुच्छेद 243-ब की 12वीं अनुसूची, जो आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की योजनाओं के कार्यान्वयन से सम्बन्धित क्रमशः पंचायतों एवं नगरपालिकाओं की शक्तियों एवं जिम्मेदारियों से सम्बन्धित हैं, में समाज के अन्य कमजोर वर्गों में विकलांगजनों का कल्याण और उनके हितों का संरक्षण शामिल है।

**2. भारतीय पुनर्वास परिषद् अधिनियम, 1992–** भारतीय पुनर्वास परिषद अधिनियम, विकलांगता के विभिन्न पहलुओं और विकलांगजनों के कल्याण एवं सशक्तीकरण को केन्द्र में रखकर, क्रियान्वित किया गया। यह परिषद् पुनर्वास व्यावसायिकों और कार्मिकों के प्रशिक्षण का नियमन और इसकी देखभाल करना और पुनर्वास एवं विशेष शिक्षा में अनुसंधान को प्रोत्साहित करता है।

**3. विकलांगता ( समान अवसर, अधिकार संरक्षण एवं पूर्ण भागीदारी ) अधिनियम, 1995–** एशिया और प्रशांत क्षेत्र हेतु आर्थिक और समाज आयोग द्वारा 1-5 दिसम्बर, 1992 में, बीजिंग में आयोजित विकलांगजनों का एशियाई और प्रशांत दशक 1993-2002 की शुरू करने हेतु बैठक में अंगीकृत एशिया और प्रशांत क्षेत्र में विकलांगजनों की पूर्ण सहभागिता और समानता सम्बन्धी उद्घोषणा को प्रभावी बनाने के लिए केन्द्रीय सरकार ने विकलांगजन (समान अवसर, अधिकार संरक्षण एवं पूर्ण भागीदारी अधिनियम), 1995 अधिनियमित किया। भारत ने इस उद्घोषणा पर अपनी सहमति दर्ज की तथा हस्ताक्षर किये।

विकलांगजन (समान अवसर, अधिकार संरक्षण और पूर्ण भागीदरी) अधिनियम, 1995 के उपबंधों के सामंजस्य और साथ ही बेहतर कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के दोहरे उद्देश्य के साथ सरकार ने राज्यसभा में 07.02.2014 को विकलांग व्यक्ति अधिकार विधेयक 2014 प्रस्तुत किया था।

**4. ऑटिज्म, प्रमस्तिष्क अंगघात, मानसिक मंदता और बहुविकलांगताओं इत्यादि से ग्रस्त व्यक्तियों के कल्याणार्थ राष्ट्रीय न्यास–** राष्ट्रीय न्यास ऑटिज्म, प्रमस्तिष्क अंगघात, मानसिक मंदता और बहुविकलांगताओं इत्यादि से ग्रस्त व्यक्तियों के कल्याणार्थ संसद में वर्ष 1999 के एक अधिनियम द्वारा गठित एक सांविधिक निकाय है। राष्ट्रीय न्यास के उद्देश्य इस प्रकार हैं–

(1) विकलांगजनों को स्वतंत्रतापूर्वक और यथासम्भव पूरी तरह से अपने समुदाय के अंदर और यथा निकट जीवनयापन करने में समर्थ और सशक्त बनाना।

(2) विकलांगजनों को अपने स्वयं के परिवार में ही रहने के लिए सहायता प्रदान करने के लिए सुविधाओं को सुदृढ़ करना।

(3) विकलांगजनों के माता-पिता अथवा संरक्षकों की मृत्यु होने पर उनकी देखभाल और संरक्षण के उपायों का संवर्द्धन करना।

(4) जिन विकलांगजनों को संरक्षकों और न्यासियों की जरूरत है, उनके लिए इनकी नियुक्ति की प्रक्रिया विकसित करना।

**5. राष्ट्रीय नीति 2006, विकलांगजनों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कन्वेशन, 2006 और एशिया तथा प्रशांत क्षेत्रों में विकलांगजनों हेतु 'अधिकार को साकार करने' सम्बन्धी कार्यनीति–** यह विश्वास किया जाता है कि निःशक्तजन देश के बहुमूल्य संसाधन हैं और यदि उन्हें समान अवसर और प्रभावी पुनर्वास उपलब्ध हों तो उनमें से अधिकांश व्यक्ति बेहतर गुणवत्ता वाली जिंदगी जी सकते हैं। सरकार ने उनके लिए ऐसा वातावरण तैयार करने के उद्देश्य से, जो उन्हें समान अवसर, उनके अधिकारों का संरक्षण और समाज में उनकी पूरी भागीदारी प्रदान कर सके, विकलांगजनों के लिए एक राष्ट्रीय नीति तैयार की है।

विकलांगता रोकथाम और पुनर्वास उपायों पर केन्द्रित इस नीति में निम्नांकित प्रावधान हैं–

(क) विकलांग रोकथाम

(ख) पुनर्वास उपाय

- (i) शारीरिक पुनर्वास रणनीति–
  - शीघ्र शारीरिक कमियों का पता करना
  - परामर्श एवं चिकित्सा पुनर्वास
  - सहायक युक्तियाँ
- (ii) विकलांगजनों की शिक्षा
- (iii) विकलांगजनों का आर्थिक पुनर्वास
  - सरकारी प्रतिष्ठानों में नियोजन
  - निजी क्षेत्र में पारिश्रमिक आधारित रोजगार
  - स्व-रोजगार
  - बाधामुक्त परिवेश
  - सामाजिक सुरक्षा
  - विकलांग बच्चों के लिए प्रावधान

**6. विकलांगजनों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्रसंघ सम्मेलन, 2006–** यह संधिपत्र 13 दिसम्बर, 2006 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अपनाया गया था और 30 मार्च, 2007 को राष्ट्र पक्षों द्वारा हस्ताक्षर हेतु रखा गया। इस संधिपत्र के अंगीकरण ने विकलांगजनों को सम्पूर्ण विश्व में अपने अधिकारों की माँग करने और अपने अधिकारों का लाभ उठाने के लिए राज्य, निजी और नागरिक समाज की एजेंसियों को जवाबदेह बनाने में वास्तव में सशक्त किया।

भारत विश्व के उन कुछ प्रमुख राष्ट्रों में से एक है जिसने इस संधिपत्र की अभिपुष्टि की है। 30 मार्च, 2007 को भारत द्वारा संधिपत्र पर हस्ताक्षर किए जाने और बाद में इसकी अभिपुष्टि किये जाने के परिणामस्वरूप देश में यह कानून 3 मई, 2008से प्रभावी हो गया।

**7. विकलांग छात्रों के लिए मैट्रिक पूर्व छात्रवृत्ति तथा मैट्रिक उपरान्त छात्रवृत्ति–**

**योजना का उद्देश्य–**

- योजना का मुख्य उद्देश्य मैट्रिक पूर्व स्तर तथा मैट्रिक उपरांत स्तर में अध्ययनरत विकलांग छात्रों को वित्तीय सहायता देना है।

- वित्तीय सहायता में छात्रवृत्ति, पुस्तक अनुदान, मार्गरक्षी/रीडर भत्ता आदि शामिल हैं।
- इन दो छात्रवृत्ति योजनाओं के अन्तर्गत लाभार्थियों का चयन राज्य सरकारों/संघ राज्य क्षेत्र की अनुशंसा के उपरान्त मेरिट के आधार पर किया जाता है।

**8. विकलांग छात्रों के लिए राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति–** विकलांग छात्रों के लिए राष्ट्रीय विदेशी छात्रवृत्ति की योजना स्नातकोत्तर तथा पीएचडी स्तर पर विदेश में अध्ययन कर रहे विकलांग छात्रों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के उद्देश्य से शुरू की गई है। प्रत्येक वर्ष बीस छात्रवृत्तियाँ दी जानी होती हैं, जिनमें से छह महिला अभ्यर्थियों के लिए आरक्षित हैं।

**9. विकलांगजनों में कौशल प्रशिक्षणार्थ राष्ट्रीय कार्य-योजना–** विकलांगजन सशक्तीकरण विभाग, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने 21 मार्च, 2015 को कौशल विकास और उद्यम वृत्ति मंत्रालय के सहयोग से विकलांगजनों के कौशल प्रशिक्षण की राष्ट्रीय कार्ययोजना शुरू की। इस कार्ययोजना का मूल उद्देश्य विकलांगजनों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण और रोजगार अवसरों में सुधार करना है। अलग-अलग विकलांगजनों, उनके परिवारों के लिए जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने हेतु एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है जो वृहत्तर अर्थव्यवस्था के लिए भी अत्यधिक लाभदायी है।

**10. जागरूकता विकास तथा प्रचार योजना–** जागरूकता विकास एवं प्रचार योजना सितम्बर, 2014 में चलाई गई तथा वित्तीय वर्ष 2014-15 से आगे के लिए प्रचलित है। इस योजना को बेहतर और कारगर परिणामों हेतु कार्यान्वयन के व्यापक आधार के लिए सरल बनाने तथा इसके कार्यक्षेत्र, उद्देश्य, पात्रता आदि को बढ़ाने हेतु वित्तीय वर्ष 2015-16 में संशोधित किया गया।

**विकलांगजन सशक्तीकरण विभाग–** विकलांगजनों/ नि:शक्तजनों के कल्याण और सशक्तीकरण पर लक्षित विभिन्न नीतिगत मसलों पर ध्यान केन्द्रित करने और सम्बन्धित गतिविधियों पर सार्थक जोर देने के लिए 12 मई, 2012 को सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय से अलग करके एक पृथक् 'डिसैबिलिटी कार्य विभाग' बनाया गया था। दिनांक 8.12.2014 को इस विभाग का नाम बदलकर 'विकलांगजन सशक्तीकरण विभाग' कर दिया गया। यह विभाग विभिन्न पदधारकों, सम्बन्धित केन्द्रीय मंत्रालयों, गैर सरकारी संगठनों, राज्यों/संघ राज्य क्षेत्र सरकारों इत्यादि के बीच प्रभावी करीबी समन्वयन सहित विकलांगजनों एवं विकलांगता से सम्बन्धित मामलों के लिए एक नोडल एजेन्सी के रूप में कार्य करता है।

**विकलांगजन सशक्तीकरण विभाग का उद्देश्य–** एक ऐसा समावेशी समाज बनाना जिसमें विकलांगजनों की उन्नति और विकास के लिए समान अवसर प्रदान किए जाते हैं, ताकि वे उपयोगी, सुरक्षित और सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर सकें।

अपने उद्देश्य को पूर्ण करने एवं मिशन को सफल बनाने के लिए, विभाग निम्नलिखित लक्ष्यों के लिए प्रयास करता है–

(क) शारीरिक पुनर्वास, परामर्श और चिकित्सा पुनर्वास तथा विकलांगताओं के प्रभाव को कम करने के लिए उपयुक्त सहायक तंत्रों और उपकरणों की खरीद में सहायता शामिल है–

(i) व्यावसायिक प्रशिक्षण सहित शैक्षणिक पुनर्वास

(ii) आर्थिक पुनर्वास और

(iii) सामाजिक सशक्तीकरण

(ख) पुनर्वास व्यावसायिकों/कर्मियों को तैयार करना।

(ग) आन्तरिक कार्य दक्षता/प्रतिक्रियाशीलता/सेवाप्रदायगी में सुधार।

(घ) समाज के विभिन्न वर्गों में जागरूकता सृजन के माध्यम से विकलांगजनों के सशक्तीकरण का समर्थन।

विशेषयोग्यजनों की पीड़ा समझने एवं उन्हें आमधारा में सम्मिलित करने हेतु एक वृहद दृष्टिकोण की आवश्यकता है। मानवजन में, विशेषयोग्यजनों के प्रति संवेदनशीलता उत्पन्न करने के लिए, हर वर्ष 3 दिसम्बर को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर नि:शक्तजन व्यक्तियों का अन्तर्राष्ट्रीय दिवस मनाया जाता है। समाज में विशेषयोग्यजनों के आत्मसम्मान, स्वास्थ्य और अधिकारों को सुधारने के लिए और उनकी सहायता के लिए एक साथ होने के साथ ही लोगों की विकलांगता के मुद्दे की ओर पूरे विश्व की समझ को सुधारने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय नि:शक्तजन दिवस का उद्देश्य बहुत बड़ा है।

विशेषयोग्यजनों की देखभाल के लिए सरकारी स्तर पर यद्यपि अनेकानेक प्रयास किए जा रहे हैं तथापि, उनके प्रति सम्मान की दृष्टि, संवेदनशील और सहयोगात्मक होना अपरिहार्य है।

## महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- नर्मदेश्वर प्रसाद ने जातीय पूर्वाग्रह के सन्दर्भ में अनेक कहावतें बताई हैं।
- भारतीय सामाजिक इतिहास में जातियाँ एक-दूसरी की पूरक एवं पोषक रही हैं।
- शूद्रक ने भी मृच्छकटिकम् में जातीय पूर्वाग्रही धारणाओं का उल्लेख किया है।
- लोकतन्त्र में कुछ राजनीतिक दल भी जातीय पूर्वाग्रहों को बढ़ावा देते दिखाई देते हैं।
- भारत की जनगणना 2011 के अनुसार कुल जनसंख्या का 16.6 प्रतिशत अनुसूचित जातियों की आबादी है।
- स्वतन्त्रता के पश्चात् अनुसूचित जातियों की सभी परम्परागत निर्योग्यताओं का उन्मूलन कर दिया गया है।
- राजस्थान में 59 अनुसूचित जातीय समूह निवास कर रहे हैं।
- राजस्थान में 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल

जनसंख्या का 13.48 प्रतिशत अनुसूचित जनजातीय आबादी है।

- राज्य में सर्वाधिक आबादी मीणा (मीना) जनजाति की है।
- राजस्थान में कुल बारह जनजातीय समूह निवास कर रहे हैं।
- जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान का देश में पाँचवा स्थान है।
- संभरणात्मक आर्थिक व्यवस्था एवं रूढ़िगत सामाजिक ढाँचे ने जनजाति के लोगों को शिक्षा एवं तकनीक से दूर रखा।
- उत्तर-पूर्वी राजस्थान में राज्य की सर्वाधिक जनजातीय आबादी लगभग 45 प्रतिशत निवास करती है।
- पिछड़े वर्गों का अभिप्राय समाज के उस वर्ग से है, जो सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक निर्योग्यताओं के कारण समाज में अन्य वर्गों की तुलना में नीचे के स्तर पर हो।
- पिछड़े वर्ग की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है। केवल आशय ही स्पष्ट किया गया है।
- संविधान के अनुच्छेद 15(4), 16(4) तथा 340 में शिक्षा व रोजगार के क्षेत्र में पिछड़े वर्गों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं।
- संविधान की धारा 340 में भारत के राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वह एक आयोग की नियुक्ति कर देश के विभिन्न भागों में स्थित पिछड़े वर्गों का जायजा ले सके।
- वी.पी. मण्डल की अध्यक्षता में मण्डल आयोग का गठन 1977 में किया गया, जिसने अपनी रिपोर्ट केन्द्र सरकार को 30 अप्रैल, 1982 को दी।
- मण्डल आयोग ने 3743 जातियों को पिछड़ी जाति घोषित किया जो देश की कुल आबादी का 52 प्रतिशत है।
- पिछड़ी जातियों के लिए सरकारी सेवाओं और शैक्षणिक संस्थाओं में 27 प्रतिशत स्थान आरक्षित रखने की सिफारिश की गई है।
- 7 अगस्त, 1990 को तत्कालीन राष्ट्रीय मोर्चा सरकार के प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह ने पिछड़े वर्गों के लिए सामाजिक न्याय की दुहाई देते हुए 27 प्रतिशत आरक्षण की घोषणा की।
- राजस्थान सरकार द्वारा सरकारी नौकरियों में, स्थानीय निकायों में एवं पंचायतीराज संस्थाओं में 21 प्रतिशत आरक्षण पिछड़े वर्गों के लिए लागू किया।
- अल्पसंख्यक शब्द का समाजशास्त्रीय भाव है अल्पसंख्यक वर्ग के सदस्यों का एक सामूहिकता के मध्य निर्मित होना।
- भारतीय संविधान की धारा 30 में विशेष तौर पर अल्पसंख्यकों की दो श्रेणियों–धार्मिक और भाषायी का उल्लेख किया गया है।
- 27 जनवरी, 2014 को केन्द्र सरकार ने राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग कानून 1992 की धारा 2 के अनुच्छेद (ग) के अन्तर्गत प्राप्त अधिकारों का उपयोग करते हुए जैन समुदाय को भी अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में अधिसूचित कर दिया है।
- 1972 में मेरी बोल्सन क्राफ्ट की पुस्तक 'ए विन्डिक्शन ऑफ द राइट्सअ ॉफ वमेन 'म ेप हलीब ारम ेरीन े' स्वतंत्रता-समानता-भ्रातृत्व' के सिद्धान्त को स्त्री समुदाय पर लागू करने की माँग की।
- सन् 1993 में 73वें और 74वें संविधान संशोधनों के माध्यम से नगर परिषदों और पंचायतों में महिलाओं के लिए सीटें आरक्षित की गईं।
- विश्व के अधिकांश देशों ने 1979 के महिलाओं के विरुद्ध हर प्रकार के भेदभाव की समाप्ति से सम्बन्धित समझौते को औपचारिक रूप से अपना लिया।
- नि:शक्तजन अधिनियम, 1995 की धारा 2(न), नि:शक्तजन को ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित करता है जो किसी चिकित्सा प्राधिकारी द्वारा यथा प्रमाणित किसी विकलांगता से न्यूनतम 40 प्रतिशत पीड़ित है।
- वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, भारत में 2.68करोड़ विकलांगजन हैं।
- विकलांगजनों (विशेषयोग्यजनों) के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा द्वारा 13 दिसम्बर, 2006 को संधिपत्र अपनाया गया और 30 मार्च 2007 को राष्ट्र पक्षों द्वारा हस्ताक्षर हेतु रखा गया।

## अभ्यासार्थ प्रश्न–

### वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

1. 'हिस्ट्री ऑफ कास्ट इन इण्डिया' पुस्तक के लेखक का नाम क्या है?

   (अ) केतकर (ब) दुबे
   (स) मजूमदार (द) मदान

2. जातीय पूर्वाग्रह से सम्बन्धित सैकड़ों कहावतों की चर्चा की है–

   (अ) केतकर (ब) नर्मदेश्वर प्रसाद
   (स) श्रीनिवास (द) मजूमदार

3. भारत की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति की जनसंख्या है?

   (अ) 14.6 प्रतिशत (ब) 15.6 प्रतिशत
   (स) 16.6 प्रतिशत (द) 17.6 प्रतिशत

4. संविधान की कौनसी धारा में अनुसूचित जातियों को अधिसूचित किया गया है?

   (अ) धारा 339 (ब) धारा 340
   (स) धारा 342 (द) धारा 341

5. संविधान की कौनसी धारा में अनुसूचित जनजातियों को अधिसूचित किया गया है?

   (अ) धारा 332 (ब) धारा 342
   (स) धारा 352 (द) धारा 362

6. राजस्थान में कितने जनजातीय समूह निवास करते हैं?

   (अ) 9 (ब) 101
   (स) 12 (द) 14

7. संविधान की कौनसी धारा में पिछड़े वर्गों की स्थिति का जायजा लेने का अधिकार राष्ट्रपति को दिया गया है?

(अ) धारा 370 (ब) धारा 340
(स) धारा 15(4) (द) इनमें से कोई नहीं

8. मण्डल आयोग के अध्यक्ष कौन थे?
(अ) वी.पी. सिंह (ब) वी.पी. मण्डल
(स) प्रो. गाडगिल (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

9. मण्डल आयोग का गठन कब किया गया?
(अ) 1977 चुनाव के बाद
(ब) 1975 आपातकाल में
(स) 1984 आम चुनाव के बाद
(द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

10. मण्डल आयोग ने अपनी रिपोर्ट सरकार को कब दी?
(अ) 1980 (ब) 1981
(स) 1982 (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

11. संविधान की धारा 15(4) व 16(4) के अनुसार कितने प्रतिशत से अधिक स्थान आरक्षित नहीं किया जा सकता?
(अ) 50 प्रतिशत (ब) 60 प्रतिशत
(स) 40 प्रतिशत (द) उपर्युक्त में से कोई नहीं

12. भारतीय संविधान की धारा 30 में अल्पसंख्यकों की कितनी श्रेणियों का उल्लेख किया गया?
(अ) एक (ब) दो
(स) तीन (द) चार

13. जैन समुदाय को अल्पसंख्यक समुदाय की श्रेणी में किस वर्ष में सम्मिलित किया गया–
(अ) 2014 (ब) 2010
(स) 2011 (द) 2015

14. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग किस वर्ष में अधिनियमित किया गया है?
(अ) 1992 (ब) 1986
(स) 1984 (द) 1989

15. कौनसे समाजशास्त्री पुरुष और स्त्री में विद्यमान जैविक भेदों को समाज में श्रम के लैंगिक विभाजन पर आधार मानते हैं?
(अ) एम.एन. श्रीनिवास (ब) इरावती कर्वे
(स) जार्ज पीटर मुरडॉक (द) ऐन ओकले

16. आई.पी.यू. की रिपोर्ट 2015 के मुताबिक, महिला जनप्रतिनिधियों के संदर्भ में वैश्विक स्तर पर भारत का कौनसा स्थान है?
(अ) 108वाँ (ब) 103वाँ
(स) 110वाँ (द) 105वाँ

17. वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में कुल नि:शक्तजनों (विशेषयोग्यजनों) की कितनी जनसंख्या है?
(अ) 3 करोड़ (ब) 2.05 करोड़
(स) 2.68 करोड़ (द) 5 करोड़

## अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. नर्मदेश्वर प्रसाद की पुस्तक का नाम बताइए।
2. अनुसूचित जातियों की निर्योग्यताएँ किस काल की सामाजिक व्यवस्था का भाग थीं?
3. राजस्थान में कितने अनुसूचित जातीय समूह निवास करते हैं?
4. जनगणना 2011 के अनुसार राजस्थान में जनजातीय आबादी का प्रतिशत कितना है?
5. राजस्थान में कितने जनजातीय समूह निवास करते हैं?
6. पिछड़े वर्ग का आशय स्पष्ट कीजिए।
7. आंद्रे बिताई कृषक वर्ग को पिछड़े वर्गों का सार क्यों मानते हैं?
8. भारत को लोकतंत्रात्मक भावनाओं का संरक्षक क्यों माना जाता है?
9. भारतीय संविधान की किन धाराओं में अल्पसंख्यकों का विवरण दिया गया है?
10. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में, 1992 में किन दो योजनाओं को जोड़ा गया?
11. अर्थशास्त्री सिलिव्या ने महिला असमानता के सन्दर्भ में क्या कहा?
12. 1882 में किस भारतीय स्त्री ने, महिला सामाजिक असमानता पर पुस्तक लिखी और उन्होंने उसमें क्या कहा था?
13. नि:शक्तजन अधिनियम, 1995 की धारा (न), में नि:शक्तजनों की क्या परिभाषा दी गई है?

## लघूत्तरात्मक प्रश्न–

1. जातीय पूर्वाग्रह पर टिप्पणी लिखिए।
2. अनुसूचित जातियों की मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था में निर्योग्यताओं पर प्रकाश डालिए।
3. राजस्थान में जनजातियों की जनसंख्या पर टिप्पणी कीजिए।
4. राजस्थान में जनजातीय निवास का भौगोलिक दृष्टि से विश्लेषण कीजिए।
5. आप कैसे स्पष्ट करेंगे कि पिछड़े वर्ग का निर्धारण जन्म या जाति के आधार पर न होकर अन्य कारणों से होता?
6. उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग के मध्य पाये जाने वाले वर्ग को पिछड़ा कहेंगे। स्पष्ट करें।
7. मण्डल आयोग को कौन-कौन से कार्य दिये गये?
8. समाजशास्त्र में अल्पसंख्यकों के सन्दर्भ में क्या परिभाषा दी गई है?
9. भारत में कौनसे समुदाय अल्पसंख्यक माने जाते हैं?
10. संयुक्त राष्ट्र के प्रतिवेदक फ्रेंसिस्को कॉपोटोर्टी ने अल्पसंख्यकों की क्या परिभाषा दी?
11. राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग क्या है?
12. महिलाओं के उत्थान के लिए, औपचारिक समानता की

संवैधानिक गारण्टी क्या है?

13. 1946 में संयुक्त राष्ट्र के द्वारा गठित आयोग के प्रमुख कार्यों की चर्चा करें।

14. भारतीय पुनर्वास परिषद् अधिनियम, 1992 के सम्बन्ध में लिखें।

**निबन्धात्मक प्रश्न–**

1. भारतम ेंअ नुसूचितज ातियोंक ीस मकालीनि स्थतिक ीस् पष्ट कीजिए।
2. राजस्थान में अनुसूचित जनजातियों पर निबन्ध लिखिए।
3. मण्डल आयोग की रिपोर्ट के प्रभाव की व्याख्या कीजिए।
4. राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में मण्डल आयोग की सिफारिशों का उल्लेख कीजिए।
5. धार्मिक अल्पसंख्यकों से आप क्या समझते हैं? उनके संरक्षण के लिए क्या उपाय किए गए हैं?
6. स्त्री समानता संघर्ष पर भारतीय दृष्टिकोण की चर्चा करें।
7. नि:शक्तजनों (विशेषयोग्यजनों) की देखभाल हेतु सरकार की क्या नीतियाँ हैं?

**उत्तरमाला**

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 1. (अ) | 2. (ब) | 3. (स) | 4. (द) | 5. (ब) |
| 6. (स) | 7. (ब) | 8. (ब) | 9. (अ) | 10. (स) |
| 11. (अ) | 12. (ब) | 13. (अ) | 14. (अ) | 15. (स) |
| 16. (ब) | 17. (स)। | | | |